१ੴ वाहिगुरू जी की फतहि ॥

162

बाबा बंदा सिंघ बहादुर

BABA BANDA SINGH BAHADUR

6

सिख मिशनरी कालेज (रजिः)

लुधियाना

१ੴ वाहिगुरु ज़ी की फतहि ॥

बाबा बंदा सिंघ बहादुर

प्रकाशक :

सिख मिशनरी कालेज (रजि.)

1051, कूचा न. 14, फील्ड गंज, लुधियाना-8

सब आफिस : A-143, फतहि नगर, नई दिल्ली-18

बाबा बंदा सिंघ बहादुर

दो शब्द

गुरु के स्पर्श, संगत तथा कृपा मे अति की शक्ति है। नीच से नीच प्रवृति के मनुष्य भी जब सच्चे सतगुरु की शरण में आ जाते हैं तो बहुत ऊंचे गुणों के मालिक बन कर संसार प्रसिद्ध व्यक्तित्व हो निकलते हैं। किसी एक मनुष्य की बात तो क्या, सच्चा सतगुरु पूरी की पूरी कौम के जीवन को बदल कर रख देता है।

भारत और विशेष कर पंजाब के इतिहास को ले लिया जाये। ब्राह्मणवाद की खोखली विचारधारा और निरार्थक पाखंडों ने यहां के वासियों को जहां आत्मिक गुणों से हीन करके रख दिया था, वहीं वे बाहुबल के पक्ष से भी अधोगति की गहरी खड्ड में गिर चुके थे। आठवीं शताब्दी के आरंभ से मुसलमान लुटेरों ने यहां की जनता को लूटना आरंभ कर दिया। सबसे पहला आक्रमण मुहम्मद बिन कासिम ने 1712 ई० मे किया। इसके पश्चात् महमूद गज़नवी ने अति की लूट मचाई और सोमनाथ के प्रसिद्ध मंदिर में से कीमती पत्थर, हीरे, जवाहारात तथा मनों मुंह सोना लूटा। यहां की स्त्रियों को गज़नवी के बाज़ारों में टके-टके बेचा गया। पर यहां के लोग बेबसी और लाचारी की दशा में हाथ पर हाथ रख कर बैठे रहे। इससे विदेशियों का उत्साह बढ़ा और कुछ सदियों में ही हिन्दुस्तान में मुसलमान एक पक्की हकूमत स्थापित करने में कामयाब हो गये। मुगल हाकिमों ने जहां, यहां की जनता को टैक्स आदि लगा कर लूटा, वहीं हिन्दुओं के धर्म मंदिर गिरा कर उनकी जगह पर मस्जिदें बनाईं और लोगों के एक बड़े हिस्से को तलवार के जोर से मुसलमान बना लिया।

ऐसे समय पर 15वीं शताब्दी में, गुरु नानक पातशाह का आगमन हुआ। उनकी स्वस्थ विचारधारा ने यहां के लोगों पर जादुई प्रभाव किया। लोग अंध विश्वास त्याग कर एक प्रभु के संग जुड़ने लगे। उन्होंने सामाजिक बुराइयों के विरुद्ध जहाद किया और मुगलों के अत्याचारों के विरुद्ध आवाज़ उठाई। गुरु अर्जन देव जी तथा गुरु तेग बहादुर जी ने अपने जीवन का बलिदान देकर, अपने सिख सेवकों को स्वाभिमान से जीने और मरने का व्यवहारिक प्रशिक्षण दिया। दशम पातशाह ने खाला की सृजना करके पंजाब के इतिहास को एक नया मोड़ दे दिया। खालसा अपने जन्म से 100 वर्ष तक लगातार संघर्ष करता रहा—युद्ध किये, शहीदियां प्राप्त कीं और अंत में पहले मिसलों के समय पर, फिर महाराजा रणजीत सिंघ की सरदारी में शक्तिशाली सिख राज्य की स्थापना की।

यह सब कुछ गुरु की स्वस्थ्य विचारधारा तथा अगवाई के फलस्वरूप ही संभव हुआ। सतगुरु की शिक्षाओं ने मामूली लोगों को सच्चे ईश्वरीय आशिकों, महान् जंगी

जरनैलों तथा सुयोग्य शासकों में बदल कर रख दिया। बाबा बन्दा सिंघ जी ऐसी महान् व्यक्तित्व में से एक हैं। गुरु गोबिन्द सिंघ जी की शरण में आने के पश्चात्-एक दम ही उन्होंने अपने अंदर नवीन शक्ति को अनुभव किया, तलवार की मुट्ठी को हाथ डाला, पंजाब में बड़े-बड़े मुगलों के गढ़ों को तोड़ा और सरहिंद जैसे मज़बूत शहर की विजय के पश्चात् वे पंजाब के शासक बन गये। उन्होंने खालसई पताका लहराई और खालसई-नानकशाही सिक्का जारी किया।

बाबा जी के महान् जीवन को एक छोटी-सी पुस्तिका में समेटने का प्रयास किया गया है। आशा है पाठक जन बाबा जी के जीवन से मार्ग दर्शन लेकर अपने पंथ के प्रति अपने कर्त्तव्यों को पहचानेंगे और कौम के भविष्य को उज्जवल बनाने में यत्नशील होंगे।

****

विषय सूची

बाबा बन्दा सिंघ बहादुर

(1) जन्म तथा प्रारम्भिक जीवन

बाबा बन्दा सिंघ बहादुर सिख इतिहास में महान् सिख सतगुरु साहिबान के पश्चात् महान् व्यक्तियों में से एक हुए हैं। बाबा जी सिख इतिहास में उस समय आते हैं जब कि समय की हकूमत (इस संबंध में पंजाब के मुगल चौधरी वज़ीरखान तथा शमशखान आदि विशेष तौर पर) सरगर्म सिखों को समाप्त करने के मनसूबे बना रही थी, क्योंकि सिखों की चढ़दी कला की दशा में उन्हें अपना काल दिखाई दे रहा था। दूसरे, सिख धर्म एक नवीन विचारधारा थी जो प्रचलित धर्मों से अलग जीवन फिलासफी पेश करता था, इसलिए तत्कालीन कट्टड़ मुसलमानों तथा हिन्दुओं को सिख धर्म का बढ़ना-फूलना माफिक नहीं आ रहा था। तीसरे, यह पहला समय था जब कि सिख देहधारी गुरु की अगवाई में अब नहीं रहे थे क्योंकि दशम पातशाह साहिब श्री गुरु गोबिन्द सिंघ जी ने ज्योति में विलीन होने से पूर्व ही श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी और खालसा पंथ को गुरुता प्रदान की थी। ऐसे विपत्ति के समय में भी बाबा जी ने अपना कर्त्तव्य इस खूबी से निभाया कि कौम में निराशा व हीनता की भावना न आ सकी बल्कि सफलता ने हर कदम पर उनके कदम चूमे। उन्होंने मुसलमानों के अजेय होने के विश्वास को तोड़ कर रख दिया। पंजाब में वजीर खान, असलम खान और शमशखान (समदखान) जैसे सूबेदारों को जूती की नोक से झुकाया। मुगल हाकिमों के जुल्मों का अंत करके उन्होंने सिख राज्य की झलक दिखलाई। अपना राज्य स्थापित करके, लौहगढ़ में अपनी राजधानी बनाया, खालसई निशान (पताका) झुलाए, गुरु नानक-गुरु गोबिन्द सिंघ जी के नाम का सिक्का चलाया और सिख संवत (सरहिंद की विजय से) जारी किया।

ऐसे महान् गुरसिख, सुयोग्य नेता और निर्भय जरनैल बाबा बन्दा सिंघ जी का जन्म 16 अक्तूबर, 1670 ई० को जम्मू की रियासत पुंछ के एक गांव राजौर में हुआ। उनका बचपन का नाम लछमन दास था। उनका पिता रामदेव एक राजपूत था। राजपूती घराने में जन्म होने के कारण और तब के रिवाज एक अनुसार बाबा जी की पढ़ाई की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया। हां वे घुड़सवारी करने, शिकार खेलने, कुशितयां लड़ने आदि के बहुत शौकीन थे और खेतीबाड़ी में भी उनका रुझान था।

(2) गुरु की खोज

अभी उनका बचपन समाप्त हुआ था और उन्होंने यौवन में पदार्पण ही किया था कि अचानक एक घटना उनके जीवन में असाधारण परिवर्तन ले आयी। एक बार उन्होंने एक हिरनी का शिकार किया जिसके पेट में से दो बच्चे निकले और तड़प कर मर गये। इस घटना ने लछमण दास के मन पर गहरा प्रभाव डाला और वह अशांत से रहने लग गये। मानसिक भटकन से छुटकारा पाने के लिए वे साधु संगत में रहने लग गये।

जम्मू की ओर जाते समय साधु संतों के लिए रजौर एक पड़ाव था । यहां लछमन दास को एक बैरागी साधु जानकी प्रसाद मिला, जिसको उन्होंने अपना गुरु धारण किया इस साधु ने उनका नाम बदल कर माधोदास रख दिया । इसी साधु के साथ वह लाहौर (पाकिस्तान) आ गये । परन्तु मन की भटकन न समाप्त हुई । लाहौर की रियासत कसूर के एक गांव राम थंमण में सन् 1686 की बैसाखी के मेले पर उन्होंने एक और साधु रामदास को अपना गुरु धारण किया । परन्तु उनका मन टिकाव में नहीं था आ रहा । अतः रामदास को छोड़ कर माधोदास और साधजनों की संगत करता हुआ, हिंदुस्तान के दक्षिणी भाग में, नासिक के पास आ निकला । यहां पंचवटी में उसका मेल एक योगी औघड़ नाथ के साथ हुआ । यह योगी रिद्धियों-सिद्धियों तथा तांत्रिक विद्या जानने के कारण बहुत प्रसिद्ध था । जंत्र-मंत्र तथा योग विद्या सीखने की भावना से माधोदास ने इस योगी की खूब सेवा की । इससे खुश होकर औघड़ नाथ ने योग के गूढ़ साधन व जादू के भेद उसको प्रदान कर दिये । योगी की मृत्यु के पश्चात् माधोदास ने गोदावरी के किनारे नंदेड़ को अपना टिकाना बना लिया और यहां पर शहर से कुछ दूरी पर अपना डेरा स्थापित किया । जंत्रों-मंत्रों के कर्तब दिखा कर इसने बहुत से लोगों को अपने पीछे लगा लिया परन्तु वह लोगों की भलाई के लिए कुछ न कर सका बल्कि अपनी शक्ति का ही प्रदर्शन करने लग गया । यदि कोई साधु संत उसके डेरे पर आता तो माधोदास अपनी गुप्त शक्तियों द्वारा उसका खूब मजाक उड़ाता और उसका अपमान करता । इस प्रकार दूर-दूर तक उसकी चर्चा होने लग गई । यहीं पर उसको गुरु गोबिन्द सिंघ जी आ मिले और उसको सिंघ सजाया । गुरु साहिब के इधर आने की घटना इस प्रकार है ।

(3) पूर्ण गुरु से मिलाप

अपने अंतिम समय पर औरंगजेब ने दसम् पातशाह के दर्शनों की इच्छा व्यक्त की थी । उसने गुरु साहिबान को प्रार्थना भी लिख भेजी जिसके उत्तर में गुरु साहिब ने अपना जगत प्रसिद्ध ज़फरनामा (विजय की चिट्ठी) लिख कर भाई दया सिंघ के हाथ भेजा पर भाई साहिब के वापिस आने में काफी समय लगा दिया । अतः गुरु जी स्वयं ही औरंगज़ेब को मिलने चल पड़े । परन्तु आप अभी बघौर (राजस्थान) में ही पहुंचे थे कि औरंगजेब की मृत्यु हो गई और गुरु जी वापिस आ गये । वे अभी दिल्ली के पास ही थे कि औरंगज़ेब के बड़े पुत्र साहिबज़ादा मुअज़म ने सहायता के लिए आपको प्रार्थना की । उसके छोटे भाई शाहजादा मुहम्मद आजम ने धोखे से राजगद्दी पर कब्जा कर लिया था । दोनों भाइयों में 8 जून 1707 में आगरा और धौलपुर के बीच जाजौ में लड़ाई हुई । गुरु जी ने ३०० लड़ाके सिख, शाहजादे की सहायता के लिए भेजे । मुअजम की फतेह हुई और वह शाह आलम बहादुर के नाम से हिन्दुस्तान का बादशाह बना । उसने गुरु जी को दर्शन देने के लिए प्रार्थना की तो गुरदेव आगरा में उसके पास ठहरे । बहादुरशाह ने गुरु जी का बहुत आदर सम्मान किया । उसने गुरु जी को दर्शनभेंट में खिल्लत (हीरों से जड़ी हुई पोशाक, 60 हज़ार की धुखधुखी और कलगी) सम्मान स्वरूप भेंट की । यह भी कहा जाता है कि बहादुरशाह ने गुरु जी को वचन दिया कि वह

उन नवाबों तथा मुगल चौधरियों को, जो पंजाब में अत्याचार कर रहे थे, उचित सजायें देगा या गुरु जी के हवाले कर देगा। इस कारण सरहिंद के वजीर खान, असलम खान तथा जबर्दस्त खान के मनों में चिंता की लहर दौड़ गई। परन्तु इन्हीं दिनों में दक्षिण में बहादुरशाह के भाई कामबख्श ने बगावत कर दी। वह बगावत दबाने के लिए दक्षिण की ओर चल पड़ा। गुरु जी भी बातचीत पूरी न होने के कारण उसके साथ ही चल पड़े। पर ऐसा प्रतीत होता है कि बहादुर शाह मौलवियों, मुल्लाओं तथा सलाहकारों के प्रभाव में आ गया था। अतः नंदेड़ में बातचीत टूट गई और गुरु साहिब ने अलग रास्ता अपना लिया। इस समय आप माधोदास को मिले। यह बात 3 सितम्बर, 1708 ई० की है।

दादू द्वारे (नरायणा नगर, रियासतजैपुर) के साधु जीत राम से गुरु जी को माधोदास के बारे में पता लगा था। इस साधु ने गुरु जी को प्रार्थना की थी कि वह माधोदास के डेरे न जाये क्योंकि वह अपनी गुप्त शक्तियों की सहायता से प्रत्येक आये गये साधु संता का अपमान करता है। पर गुरु जी का तो मिशन ही कुमार्ग पर पड़े लोगों को सही मार्ग पर डालना था। अतः आप जानबूझ कर माधोदास के डेरे पर आये। वह उस समय डेरे में नहीं था। गुरु साहिब उसके पलंग पर जा बिराजमान हुए। बाकी के गुरु जी के सिंघों ने बगीचे में लगे फलों का निर्भीकतापूर्वक आहार किया और बगीचे को उजाड़ दिया। माधोदास के चेले चाटड़े बहुत क्रोधित हुए और उन्होंने अपनी गुप्त शक्तियों द्वारा गुरु साहिब तथा सिखों को नीचा दिखाना चाहा। वे सारा ज़ोर लगा कर हट गये, उनकी रिद्धि-सिद्धि काम न आई। थक हार कर उन्होंने माधोदास को बुला भेजा। उसने बहुत ज़ोर लगाया, परन्तु उसकी एक न चल सकी। अंत में वह गुरु जी के सामने आया। जो विचार-वार्तालाप गुरु जी तथा माधोदास के बीच हुए, वे रुचिकर हैं। लगभग सभी इतिहासकारों ने उसका वर्णन एक प्रकार से ही किया है श **"अहमद शाह बटालीऐ"** ने अपनी पुस्तक—**इबतदाइ सिंघां वा मजहबि देशां** में इस वार्तालाप का वर्णन इस प्रकार किया है :

माधोदास	: आप कौन हो ?
गुरु साहिब	: वह, जिसको तूं जानता है !
माधोदास	: मैं क्या जानता हूं ?
गुरु साहिब	: अपने मन में अच्छी तरह सोच !
माधोदास	: आप गुरु गोबिंद सिंघ हो ?
गुरु साहिब	: हां।
माधोदास	: आप यहां किस तरह पधारे हैं ?
गुरु साहिब	: मैं इसलिए आया हूं कि तुझे अपना सिख बनाऊं।
गुरु साहिब	: मैं हाजिर हूं, जरूर ! मैं आपका बन्दा (गुलाम) हूं।

गुरु जी ने उसको अमृतपान करवा कर बन्दा सिंघ नाम प्रदान किया। अमृतपान करवाने की घटना का वर्णन अहमदशाह बटालीऐ, अलीउदीन मुफ्ती, मुहम्मद अलीखान अनसारी, गणेशदास बडेहरा, कन्हैया लाल तथा अन्य अनेकों इतिहासकारों ने अपनी-अपनी पुस्तकों में किया है। दस गुरु साहिबान के इतिहास तथा मानवता को

सीधे रास्ते पर डालने के लिए उनका अटूट संघर्ष, गुरु अर्जन देव जी, गुरु तेग बहादुर जी, बाबा दयाला जी, भाई मतीन्दास जी तथा छोटे साहिबजादों की हृदयविदारक शहादतों के वर्णन ने बन्दा सिंघ के विचारों को एकदम बदल कर रख दिया। वह अपने अंदर अनंत शक्ति तथा जोश का संचार महसूस करने लग गया था और बार-बार गुरु-दोषियों को कड़ी सजा देने के विचार उसके मन में आने शुरू हो गये थे।

(4) पंजाब की ओर कूच की तैयारी

इन्हीं दिनों में एक और घटना घटी जिसके फलस्वरूप गुरु साहिब ने बन्दा सिंघ को खालसा का जत्थेदार नियुक्त करके पंजाब की ओर भेज दिया।

वजीरखान के भेजे हुए पठान ने गुरु साहिब को कटार द्वारा उस समय घायल कर दिया जब आप शाम के दीवान के पश्चात् एकांत में प्रभु भक्ति में लीन थे। इस घटना का "अमृत गुटके" के लेखक ने बहुत रोचक ढंग से वर्णन किया है। चाहे घावों को सी दिया गया था पर गुरु जी युद्धों में भाग लेने के काबिल नहीं रहे थे। इसलिए उन्होंने बन्दा सिंघ को खालसा का जत्थेदार नियुक्त करके और "बहादुर" का खिताब देकर पांच प्यारों—भाई विनोद सिंघ, भाई काहन सिंघ, भाई बाज सिंघ, भाई दया सिंघ और भाई रण सिंघ की अगवाई में पंजाब भेजा। उसे निशान साहिब और नगारा भी प्रदान किया। पांच तीर भी दिये और साथ ही 20 सिख और दिये। बन्दा सिंघ को पांच प्यारों की अगवाई में चलने तथा आचरण में परिपक्व तथा स्वच्छ रहने की बात बी दृढ़ करवाई गई।

इतिहासकार सी. एच. पैन के अनुसार बन्दा सिंघ को इसलिए जत्थेदार नियुक्त किया गया था कि उसके संग गुरु जी का अगम्य लगाव या स्नेह हो गया था। वह लिखता है :

....and to whom the become so much attached that he nominated him his successor, not as a guru but as Commander of forces of Khalsa.

बन्दा सिंघ को रास्ते में ही दसम् पातशाह के ज्योति में विलीन होने का समाचर मिला। वह कई प्रकार की कठिनाइयों तथा आपत्तियों का सामना करते हुए पंजाब की ओर बढ़ रहे थे। दिल्ली के समीप पहुंचने तक बाबा जी काफी प्रसिद्ध तथा हरमन प्यारे हो चुके थे। इसका कारण था उनका उदारचित होना। जो भी कोई उनके पास आता वह मनमांगी मुराद पाता। दुखियों के दुःख दूर करने के लिए वह प्रभु के पास अरदास करते। गरीबों में वे बहुत खुले दिल से धन दौलत बांटते। मोहर से कम किसी को न देते। इस प्रकार उनकी शोभा जगह-जगह पर फैल गई। जिसका वर्णन भाई रतन सिंघ भंगू ने इस प्रकार किया है :

यों कर बंदे भई प्रतीत। तब बंदा भयो निस्चल चीत।
पुत मंगे तिस दिवाऐ पूत। बुध मंगे दे बुध बहुत।८।
जेकर कोई दुखी आ जावे। कर अरदास तिस दुख मिटावे।
वाहिगुरु दा जाप जपावे। जो मांगै तिस सोऊ दिवावै।

ऐसी जग में पर गई धांक। आए मिलैं राणा और रांक।
दरहि वे जो निवक आवै। होहि नेड़े बहु चरनी पावै।10।

(प्राचीन पंथ प्रकाश 94)

दूसरे उस राह में लोगों को चोरों, लुटेरों तथा डाकुओं से बचाते आ रहे थे। इस प्रकार आम लोगों की हमदर्दी को उन्होंने जीता। सिख संगत तो उनको गुरु जी का प्रतिनिधि जान कर उनके दर्शन करने आती थी।

दिल्ली पहुंच कर वे पंजाब की ओर बढ़ने लगे क्योंकि वे पंजाब पहुंचने से एक मज़बूत खालसा फौज तैयार करना चाहते थे। बाबा जी ने इलाके में डोंडी भी फिरायी और एलान किया "हम पेशावर आक्रमणकारियों तथा अत्याचारियों हाकिमों के अत्याचारों से गरीबी तथा दलित जनता को बचाने के लिए आये हैं। खाने पीने की वस्तुओं दूध, घी, दहीं के बिना हमें किसी और वस्तु की आवश्यकता नहीं। आओ, आप भी खालसा हो जाओ, हम आपको मुल्क के मालिक बना देंगे।"

(5) अत्याचारियों की धुनाई :

दिल्ली से 20 मील दूर खरगोडे परगना के गांव "सिहरी' तथा खंडा के पास उनके साथ आये सिंघों ने भी अपने सज्जनों-मित्रों को बंदा सिंघ का साथ देने के लिए पत्र लिखे। जब सिखों को पता चला कि साहिबजादों के कातिल वजीर खान नेगुरु जी को कत्ल करने की साजिश भी की है, तो सिंघो में गुस्से की लहर दौड़ गयी। सतगुरु साहिबान के हुकमनामों को देखते ही सिखों ने बंदा सिंघ को मिलने के लिए काफिले डाल दिये। उन्होंने बारूद, सिक्का, हथियार और घोड़े खरीदने की खातिर अपने घर घाट तथा बैल आदि बेच दिये। भाई रतन सिंघ भंगू खालसा की तैयारी का वर्णन इस प्रकार करते हैं :

जैसी भेजी लिख अरदास। भेजी खालसे, खालसे पास।
सो सुन खालसे सिर पर धरी। तुरन्त चलन की तिआरी करी।
जिसे सिख पहि खर्च न होहि। बिना खर्च बंड खावै सोइ।
असिख सिखन बोवैं सुनाही। कहैं सिख सभ ऊहा माराहीं।

सरहिंद के वजीर खान को सिखों की तैयारियों का पता लगा तो उसने सरहिंद को आने जाने वाले रास्तों पर चौंकियां बिठा दीं ताकि कोई सिख मालवा तथा दुआबे की ओर न जा सके। पर फिर तो मालवे के सिख बाबा बंदा सिंघ जी के जत्थे के साथ आ मिले भाई भगतू के खानदान में से भाई फतेह सिंघ, भाई रूपे की औलद में से भाई कर्म सिंघ, धर्म सिंघों, बांगड़ देश के सिख तथा उत्तर की ओर से बराड़ सिंघ बाबा जी की फौज में शामिल हुए। फूलकियां के राम सिंघ, तिलोका सिंघ ने दिल खोल कर आर्थिक सहायता की। सरहिंद के रहने वाले अली सिंघ, माली सिंघ कैद में से भाग कर बाबा जी के पास आ गये। लूटमार की आशाओं से कई डाकू तथा लुटेरे भी सिखों केसाथ आ मिले।

कीरतपुर में माझा तथा दुआबा के सिखों का भारी दीवान हुआ। पर नाकाबंदी होने के कारण वे वहीं पर बाबा सिंघ बहादुर के आदेशों का इंतजार करने लगे।

(6) मुगलों के साथ पहली लड़ाई (सोनीपत) :

उधर बाबा जी अभी पंजाब के दूसरे सिखों की इंतजार करना चाहते थे, पर सरहिंद के आली सिंघ ने शीघ्र आक्रमण करने की प्रार्थना की । सिखों के 500 के जत्थे ने सोनीपत पर आक्रमण कर दिया । सिंघों की संख्या चाहे कम थी पर उनमें "धर्म युद्ध का चाओ" उमड़ रहा था । अतः उन्होंने बड़ी तेजी से आक्रमण कर दिया । पहले हल्ले में ही सोनीपत पर सिंघ काबिज हो गये । सोनीपत का फौजदार दिल्ली की ओर भाग गया. ।

"भूणे" गांव के पास सिखों ने शाही खजाना लूटा । कैथल का हिंदू आमल कुछ घुड़सवार लेकर सामना करने के लिए आया पर सिखों ने उसको गिरफ्तार कर लिया । बाद में सारे घोड़े और हथियार लेकर छोड़ दिया और अपनी ओर से उसको कैथल का आमल नियुक्त कर दिया ।

(7) समाणा की लड़ाई :

फिर बाबा जी ने समाणा की ओर मुंह मोड़ा । गुरु तेग बहादुर जी को शहीद करने वाला जल्लाद, जलालुद्दीन और साहिबजादों को कत्ल करने वाले जल्लाद शाशलबेग तथा बाशलबेग यहीं पर रहते थे । समाणा इलाके का धनाढय शहर था । यहां पर बड़े-बड़े पदों पर आसीन रह चुके खानदानी सैयद तथा मुगल बसते थे । इन में 23 तो ऐसे थे जिन्हें पालकियों में आने-जाने का अधिकार था । यहां के फौजदार ने सिखों की सरगर्मियों की ओर कोई ध्यान न दिया । पर उनकी अपनी शक्ति का उस समय पता लगा जब 11 नवम्बर, 1709 को सुबह-सवेरे ही सिख चारों ओर से शहर पर टूट पड़े कई घंटे शहर के बाजारों तथा गलियों में तलवार चलती रही । सिखों के साथ लुटेरे भी थे, जो शहर में दाखिल हो गये और काफी लूटमार हुई । बड़े-बड़े जमींदारों के सताऐ हुए मज़दूर किसान भी उठ खड़े हुए । उन्होंने जिमीदारों के घर-बार लूट लिये और उनकी हवेलियों को अग्नि भेंट कर दिया । इस प्रकार रात पड़ने से पहले ही समाणा के महलों तथा हवेलियों को रख के ढेर बनाकर रख दिया । इस कहर भरे हमले में 20 हजार लोगों के मरने का अंदाजा है । जो बच गये, उनमें से अधिकतर सदा के लिए समाणा छोड़ कर चले गये ।

भाई फतेह सिंघ की बहादुरी से खुश हो कर, बाबा जी ने उसको समाणा तथा समीपवर्ती नौ पर्गनों का फौजदार नियुक्त किया । समाणे की विजय ने सिखों के हौंसले बुलंद कर दिये । उनके हाथ काफी धन तथा हथियार लगे ।

अब बंदा सिंघ का लक्ष्य सरहिंद पर चढ़ाई करने का था । पर उनकी सैनिक शक्ति इतनी नहीं थी जिससे विजय का निश्चय हो सके । अतः बाबा जी कीरतपुर वाले सिंघों को साथ लेकर सरहिंद पर आक्रमण करना चाहते थे । वे कीरतपुर की ओर हो गये । रास्ते में उन्होंने शत्रुओं की धुनाई का कार्यक्रम जारी रखा ।

घुड़ाम के पठानों ने राह रोकने का यत्न किया, पर वे सिंघों के सामने टिक न सके । छुड़ाम का कस्बा लूट-पाट कर बर्बाद कर दिया और भाई फतेह सिंघ के अधीन कर दिया गया । ठसके नामक स्थान पर में कोई सामना न हुआ । मामूली सी झड़प के पश्चात् सिख ठसके पर काबिज हो गये । मुस्तफाबाद (जगाधरी के समीप) ने हाकिमों

के सामना करने के लिए 2000 शाही फौजें को दो तोपें दे कर भेजा। लुटेरे, जो सिंघों के साथ हो लिए थे, तो तोपों का नाम सुनकर ही भाग गये। परन्तु सिंघों ने डट कर सामना किया और फौजदार के आदमियों को भगा दिया जो भागते हुए एक तोप भी छोड़ गये। फिर सिंघों ने कपूरी की ओर मुंह किया।

कपूरी का हाकिम कदमुद्दीन बहुत अयाश तथा बदनाम वृत्ति का व्यक्ति था। उसका बाप अमानउल्ला औरंगज़ेब के समय में गुज़रात का हाकिम था। इसी की कमाई ने कदमुद्दीन को बदमाश बना दिया था। सिंघों ने सुबह होते ही कपूरी पर आक्रमण कर दिया। कदमुद्दीन की हवेली को आग लगा दी गई। कदमुद्दीन का कुछ पता न लगा, शायद वह आग में ही जल कर मर गया होगा।

(8) सढौरा की लड़ाई :

अब सिंघों का लक्ष्य सढौरा था। यहां के हाकिम उस्मान खान ने पीर बुद्ध शाह जी (सैयद बदरुद्दीन) को कत्ल कर दिया था, क्योंकि पीर ने भंगाणी के युद्ध में साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की सहायता की थी। इस युद्ध में (जो हिंदू पहाड़ी राजाओं के संग हुआ था) पीर जी ने अपने चार पुत्र तथा 500 मुरीद भेजे थे। उनके चारों पुत्र युद्ध में शहीद हो गये थे। सिंघ भला अपने गुरु जी के साथ हमदर्दी रखने वाले पीर जी का ऐसी दशा होते कैसे सहन कर सकते थे ? अतः उन्होंने बड़े जोर शोर से सढौरे पर आक्रमण किया।

यहां का हाकिम हिंदुओं का कट्टड़ शत्रु था और उनका अपमान करता रहता था। मुर्दों को जलाने भी नहीं देता था। हिंदुओं के घरों के आगे गाय कत्ल करवाता रहता था। धर्मों-कर्मों की भी मनाही थी। अतः जो लोग इस से दुःखी थे, वे सिंघों के साथ मिल गये। लोग इतने भड़क गये थे कि उन्होंने कुतबुल अकताब के मुज़ार को आग लगा दी। गलियों और बाजारों में खूनी लड़ाई हुई। बड़े-बड़े सैयद, शेख मुल्लां तथा अमीरज़ादे पीर बुद्धू शाह जी की हवेली में घुस गये। उनका विचार था कि सिख उस हवेली पर आक्रमण नहीं करेंगे। पर लोगों ने उस हवेली को आग लगा दी। इस जगह पर अब "कत्ल गढ़ी" नामक गुरुद्वारा है।

(9) सरहिंद पर आक्रमण की तैयारी :

अब हम उन सिंघों का वर्णन करते हैं जो कीरतपुर में एकत्र हो रहे थे। उनके एकत्र होने के समाचार और सरहिंद की ओर बढ़ने के कार्यक्रम ने वजीर खान की नींद हराम कर दी। उसने सिंघों के दोनों दलों को मिलने से रोकने के लिए जी जान से यत्न किये। मलेर कोठेले के नवाब शेर मुहम्मद खान को कीरतपुर वाले सिखों को आगे बढ़ने से रोकने के लिए भेजा। नवाब के साथ उसका भाई खिजरखान तथा दो भतीजे खान तथा वली मुहम्मद भी थे। मलेर कोटलियों के इलावा उसके साथ रोपड़ के रंघड़ तथा सरहिंद के कुछ फौजी दस्ते भी थे। दूसरी ओर सिखों की संख्या मुकाबले में बहुत कम थी। उनके पास तो बूंदकें भी पूरी नहीं थी। रोपड़ के पास दोनों सेनाओं का सामना हुआ। दिन भर घमासान का युद्ध हुआ। सिंघ बहुत बहादुरी से लड़े। पर शाम को ऐसा लग रहा था जैसे शेर मुहम्मद खान जीत जायेगा। रात को सिंघों का एक और जत्था आ गया। दूसरे दिन सुबह होते ही खिज़र खान ने हमला किया। वह आगे ही

आगे बढ़ता गया। दोनों सेनाएं इतनी समीप हो गयीं कि हाथों हाथ युद्ध आरम्भ हो गया। सिघों ने खूब तलवार चलाई। खिज़र खान ने सिखों को हथियार फेंक देने के लिए कहा, पर इसी समय एक गोली उसकी छाती में आ लगी, जिसने उसको हमेशा के लिए मौत की गोद में सुला दिया। पठान, खिज़र खान को गिरते हुए देख कर, भाग उठे। शेर मुहम्मद खान स्वयं आगे बढ़ा। उसके भतीजे भी साथ थे, जो अपने पिता की लाश उठाना चाहते थे। पर सिघों ने उन दोनों को भी जहनुम में पहुंचा दिया। शेर मुहम्मद खान भी घायल हो गया। मुगल सेनाएं सिर पर पैर रखकर भाग उठीं। इस प्रकार मैदान सिघों के हाथ रहा।

सिघों ने एक पल गंवाना भी व्यर्थ समझा। वह बाबा बंदा सिघ जी के जत्थे के साथ मिलने के लिए दक्षिण की ओर हो चले। उधर से बंदा सिघ भी उनकी ओर आ रहे थे। बाबा जी ने उसी ओर 'बनूड़' पर विजय प्राप्त की थी। वहीं पर उनको कीरतपुर वाले सिघों की विजय की खबर मिली। वे स्वागत के लिए आगे बढ़े। अंबाला से रोपड़ को जा रही सड़क पर खरड़ और बनूड़ के बीच सिघों के दोनों दल आपस में आ मिले। सिघों ने बहुत खुशियां मनाईं। खुशी में वे जैकारे पर जैकारा छोड़ते जायें। कड़ाह प्रशाद के खुले गफ्फे बांटे गये।

अब सिघ गुरुमारी सरहिंद की ओर हो चले। छोटे साहिबजादों की शहीदी का भयानक दृष्य एक बार फिर उनकी आंखों के सामने कौंध गया। उनके मनों में बदले की आग दहक उठी। सिघों की तैयारी को देख कर वजीर खान को कंपकपी छिड़ गयी। उसको प्रतीत होने लग गया था कि शाही फौजें भी सरहिंद को नहीं बचा सकेंगी। उसने पापी सुच्चा नंद के भतीजे को एक हजार आदमी दे कर कहा कि वह सिघों के साथ जा मिलें और यदि हो सके तो बंदा सिघ को पार लगा दें और जब लड़ाई हो जाये तो फिर शाही फौजों में आ मिले। इस प्रकार सिखों के मनोबल गिर जायेंगे और निराशा आ जायेगी।

(10) वजीरखान की तैयारी :

वजीरखान ने युद्ध की तैयारी करने में सारे साधन जुटा दिये। अपने सज्जनों मित्रों, राजा राजवाड़ों को बुला लिया। जहाद का नारा लगाया, जिसके फलस्वरूप दूर समीप से आ रही सरकारी फौजों के साथ गाज़ियों के झुरमुट वजीरखान के पास आ एकत्र हुए। उसने सिक्के और बारूद को घर भर लिये। तोपों की लाम डोरी तथा हाथी ले लिये। इस प्रकार लगभग 20 हजार फौज तथा गाजियों सहित वजीर खान सिखों की राह रोकने के लिए चल पड़ा।

दूसरी और सिघों की संख्या तो है ही कम थी। उनके पास अच्छे हथियार तोपें आदि भी नहीं थीं। घोड़े भी कम थे। पर उनके अंदर वाहिगुरु का अटल विश्वास तथा आत्मबल, आत्मविश्वास कूट-कूट कर भरा हुआ था। छोटे साहिबजादों की शहीदी उनके अंदर धर्म युद्ध का चाओ पैदा कर रही थी। बाबा बंदा सिघ जी ने सरदार बाज सिघ, सरदार फतेह सिघ आदि को आदेश दिया कि जैसे भी हो सके वजीर खान को पकड़ लिया जाये, और जो मुसलमान अधीनता को स्वीकार कर ले और जो हिंदू चोटी दिखा दे, उनको कुछ न कहा जाये। बाकी "जो अड़े सो झड़े" के कथानुसार कृपाण भेंट कर दिया जाये।

12 मई 1710 को चपड़ चिड़ी के मैदान में दोनों सेनाओं का आमना सामना हुआ। सिघों की कमान भाई फतेह सिंघ, बाज सिंघ, कर्म सिंघ, धर्म सिंघ, आली सिंघ तथा शाम सिंघ के हवाले थी। फौज की चाल देखनें तथा हुकम देने के बंदा सिंघ एक ऊंचे टीले पर चढ़ बैठा।

दोनों ओर से बहुत घमासान का आक्रमण हुआ। तोपों की कड़कदार आवाज़ों ने आसमान को कंपकपा दिया। जो डाकू और लुटेरे आदि केवल लूट मार के उद्देश्य से सिखों में आ मिले थे, वे युद्ध आरंभ होते ही भाग गये। सुच्चा नंद का भतीजा अपने 1,000 साथियों सहित सिखों का साथ छोड़ गया। ऐसा लग रहा था कि जैसे मुसलमानों का पलड़ा भारी हो। बाबा जी ने स्वयं कमान संभाल ली। उनके आने से तथा हला शेरी देने से सिखों के उत्साह बढ़ गये और उन्होंने कृपाणें सूत लीं और हाथियों पर भी चढ़ गये। हाथी मुगल सरदारों सहित पीछे को भाग उठे। इस हफड़ा-दफड़ी में शेर मुहम्मद खान तथा ख्वाजा अली मलेरकोटीऐ मारे गये। वजीर खान ने बाज सिंघ को आ ललकारा। बाज सिंघ ने झपटा मार कर वजीर खान का नेजा छीन लिया उसके घोड़े के सिर पर दे मारा। उधर से भाई फतेह सिंघ ने म्यान में से कृपाण निकाल कर वजीर खान की पेटी पर इतनी बहादुरी और ज़ोर से दे मारी कि वह बगल से ले कर कमर तक चीरती साफ निकल गयी। इस प्रकार वजीर खान अपने पापों का फल भुगतता हुआ इस दुनियां से कूच कर गया। उसका मरना ही था कि मुगल फौजें मैदान में से भाग उठीं।

(11) सरहिंद पर अधिकार :

14 मई, १७१० को सिख विजेताओं की सूरत में सरहिंद में दाखिल हुए। महल हवेलियां गिरा कर रख दी गयीं। शाही अमीरों को लूटा गया। सुच्चा नंद की हवेली जला कर राख कर दी गयी, जिसका वर्णन मुहम्मद कासिम इस प्रकार करता है "**खास करके वजीर खान के पेशकार सुच्चा नंद की हवेली और माल दौलत जैसे इस दिन के लिए ही बने और जमा किये हुए थे कि स्वर्गों जैसे महल कौवों के अड्डे बनें। धन्य वह ईश्वर** है जिस ने सच्ची अदालती दरगाह में से निर्बल चींटी मात्र मनुष्य के दोषी सांप तथा एक छोटा सा मच्छर खूंखार हाथी मार देने का कारण बन जाते हैं। मैंने आस-पास के लोगों से सुना है कि शहीद (वजीर खान) की हकूमत के दिनों में कौन सा अत्यचार था जो इस अन्यायी (सुच्चा नंद) ने गरीब प्रजा पर न किया हो और फसाद का कौन सा बीज था जो इसने अपने लिये न बीजा हो, जिसका फल इसको प्राप्त हुआ।"

बाबा बंदा सिंघ जी ने हुक्म दिया कि लूटमार बंद की जाय। इस बात का कई सिघों ने बुरा भी मनाया क्योंकि सिखों ने गुरुमारी सरहिंद का खुरा खोज मिटाने का प्रण **अकाल तख्त साहिब** पर अरदास करके लिया था। (बाद में जा कर 1763 में सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया ने प्रण को पूरा किया।)

सरदार बाज सिंघ को सरहिंद का सूबेदार नियुक्त किया गया। सरदार आली सिंघ को उनका डिप्टी नियुक्त किया गया। भाई फतेह सिंघ जी समाणा के फौजदार ही रहे। थानेसर की सूबेदारी सरदार बाज सिंघ के भाई सरदार राम सिंघ को सौंपी गई।

सरहिंद एक केन्द्रीय स्थान था, जहां पर सिख हर ओर से आक्रमण कर सकते थे। इस विजय से सिखों का दबदबा तथा प्रभाव सारे पंजाब में पड़ गया। छोटे-छोटे जिमींदारों, नाजिमों, चौधरियों तथा फौजदारों ने खालसा की अधीनता मानने में ही अपना कल्याण समझा। कईयों ने तो सिख धर्म धारण कर लिया जैसे सरहिंद के निकटवर्ती गांव के फौजदार दीनदार खान तथा वजीर खान के रिकार्ड कीपर वजीर खान ने अमृतपान करके सिखी धारण कर ली। नवाब अमीनल दौला, दस्तूरल इन्शा में खालसा के दबदबे का वर्णन इस प्रकार करता है। **"इस इलाके के समीप के गांव का हाकिम दीनदार खान दीनदार सिंघ हो गया, सरहिंद का अखबार नवीस मीर नसीरूद्दीन, मीर नसीर सिंघ बन गया। इस प्रकार मुसलमानों की एक बड़ी संख्या इस्लाम धर्म त्याग कर गलत राह पर पड़ गई और उसके (बंदा सिंघ के) मित्र तथा साथी बनने के लिए उन्होंने पक्के वायदे तथा इकरार कर लिया।"**

(12) राम-राइयों की धुनाई :

इस समय बाबा जी को खबर मिली कि "घुड़ाणी" गांव (थाना पायल) के राम राइये, सिंघों को (दसम पातशाह के सिंघ होने के कारण) तंग करते थे। उन्होंने अरदास करते हुए भाई बुलाका सिंघ का अपमान किया है। यह सुनते ही बाबा जी राम राइयों को सीधी राह पर डालने के लिए चल पड़े। उन्हें उचित सजाएं देकर वहां पर अपनी चौंकी कायम की। सरदार बलाका सिंघ को पायल का थानेदार नियुक्त किया। यहीं पर धर्मकोट तथा अन्य स्थानों के चौधरियों ने आ कर नज़राने पेश किये।

(13) मलेरकोटला पर आक्रमण :

फिर बाबा जी को पता लगा कि मलेरकोटले के पिछले नवाब शेर मुहम्मद खान ने दिसम्बर, 1704 की लड़ाई के समय सरसा की एक सिख स्त्री अनूप कौर को कैद कर लिया और उसको अपने महलों में ले आया था। सिख बीबी ने अपना नारीत्व कायम रखने की खातिर अपनी कृपाण से आत्महत्या कर ली थी। शेर मुहम्मद खान ने बदनामी से डर कर सिख बीबी को महलों के पास ही दफना दिया था। बाबा जी ने मलेरकोटले पर आक्रमण किया परन्तु शहर को कोई नुक्सान नहीं पहुंचाया क्योंकि इसी शेर मुहम्मद खान वजीरखान के दरबार में छोटे साहिबजादों की शहीदी के विरुद्ध सख्त रोष प्रकट किया था। कबरों की खुदाई व खोज के पश्चात् सिख बीबी की लाश मिल गई जिसका सिख रीति से संस्कार कर दिया गया। इसके पश्चात् बाबा जी रायकोट की ओर चल पड़े।

कबरें उखाड़ने की बात को मुसलमान इतिहासकारों ने बहुत बढ़ा चढ़ा कर लिखा है। खाफी खान ने तो बाबा बंदा सिंघ को एक दैंत और दरिंदे के तौर पर पेश किया है पर वास्तविकता यह है कि बीबी अनूप कौर की लाश को ढूंढने का वर्णन किसी ने भी नहीं किया है।

रायकोट से बाबा जी सरहिंद की ओर मुड़ पड़े। इस समय बाबा बाज सिंघ के यत्नों के फलस्वरूप सढौरे तथा रायकोट और माछीवाड़े से करनाल का सारा इलाका सिंघों के अधीन हो गया था।

14— राज्य प्रबंध :

सरहिंद पहुंच कर बाबा जी ने राजसी ठाठ बनाने की ओर ध्यान दिया। सढौरे तथा नाहन के बीच, गांव आमूवाल की सीमा में मुखलिसगढ़ को जो कि ऊंचे-नीचे टीलों तथा खड्डों से घिरा हुआ था, अपनी राजधानी बनाया और इसको लोहगढ़ का नाम दिया। अगली कार्यवाई के लिए किले को आधार बनाया। यहां पर शाही महल आदि का निर्माण किया गया। यहीं से गुरु नानक गुरु गोबिन्द सिंघ जी के नाम का सिक्का जारी किया गया। इस सिक्के की एक ओर फारसी में ये अक्षर अंकित थे :

सिक्का ज़ुवबर हर दो आलम,
तेगि नानक वाहिब अस्त ।।
फतहि गोबिंद सिंघ शाहि-शाहान,
फ़जलि सच्चा साहिब अस्त ।।

जिसका अर्थ है, "गुरु नानक जी द्वारा प्रदत्त तेग की कृपा हुई—दो जहान पर सिक्का मारा। शाहों के शाह गुरु गोबिंद सिंघ की फतेह हुई, एक सच्चे ईश्वर ने कृपा की।"

सिक्के की दूसरी ओर ये अक्षर थे :

जरब ब-अमन वहिर, मुसव्वरत शहिर,
ज़ीनतु खततु, मुबारक बख़्त ।।

जिसका अर्थ है, "संसार के शांति स्थान शहरों की मूरति, भाग्यशाली राजधानी से जारी हुआ।"

सरकारी कागज पत्रों के नीचे लिखी मोहर लगायी जाती थी :

अज़मित नानक गुरु हम ज़ाहिरों हम ब तन अस्त ।।
पाविशाहि दीनो-दुनीआ, आप सच्चा साहिब अस्त ।।

हिन्दी अनुवाद : "हर ओर (अंदर बाहर) गुरु नानक की ही महानता है, वह सच्चा साहिब दीन दुनियां का पातशाह है।" बाद में जाकर इस मोहर को इस प्रकार बदल दिया गया :

देगो तेगो फतहि-ओ नुसरति बे-दिरंग ।।
याफ़त अज़ नानक गोबिंद सिंघ ।।

(हिन्दी रूपातंर : देग तेग, फतेह तथा सेवा गुरु नानक-गुरु गोबिंद सिंघ के दर से प्राप्त हुई।)

बाबा बंदा सिंघ जी ने सरहिंद की विजय के अवसर पर एक नया संवत भी जारी किया।

बाबा जी ने जिमींदारी की लाहनत को भी समाप्त करके रख दिया। सदियों से कुछ लोग जमीन पर जबर्दस्ती कब्जा किये बैठे थे, और मूल मालिकों-श्रमिकों तथा किसानों को, उन्होंने अपना नौकर बनाकर रखा हुआ था, जिनसे पशुओं की तरह काम

लिया जाता था। जिमींदार इन श्रमिकों की खून पसीने की कमाई पर ऐश कर रहे थे, और जब जी चाहता इनको नौकरी से निकाल देते या नौकरी में रख लेते थे। बाबा जी ने जिमींदारों को बेदखल कर दिया। जमीन वास्तविक मालिकों-श्रमिकों तथा किसानों में बांट दी।

सिखों के ताकत में आने के कारण गरीबों ने भी सुख की सांस ली। सदियों से दुत्कारें जाने वाले लोग स्वाभिमान से चलने फिरने लग गये। विलियम इर्विन इस तथ्य का वर्णन इस प्रकार करता है। "सिखों के अधिकार में आये सारे परगनों में पुराने रिवाजों का उलट-पुलट हो जाना हैरान कर देने वाला तथा संपूर्ण क्रम था। एक नीच भंगी या चमार के लिए जिसको हिंदुस्तानियों के विचार में अति नीच समझा जाता है, केवल घर छोड़ कर बंदा सिंघ बहादुर के पास पहुंचना ही होता था कि थोड़े समय में ही वह अपनी नियुक्ति का आदेश हाथों हाथ लेकर अपनी जन्म भूमि का मालिक बन कर वापिस आ जाता था। जब वह अपनी सीमा पर आकर पैर रखता, तो उच्च जातीय कुलीन तथा धनाढ्य लोग उसका स्वागत करने के लिए आ जाते और उसको साथ लाते। वहां पहुंचने पर ये लोग हाथ बांध कर उसके सामने खड़े हो जाते और उसके हुकम की इंतज़ार करते। क्या मजाल कोई उनकी हुकमउदूली कर सके।"

(15) उत्तर प्रदेश की दिशा में चढ़ाई :

सरदार कपूर सिंघ प्रचारक ने समाचार भेजा कि देउबंद (उ.प्र) का फौजदार गावं ऊनारसा में नये सजे सिंघों पर अत्याचार कर रहा है। बाबा जी यह सुनते ही यू.पी. की ओर हो लिए। अभी वे सहारनपुर के पास ही पहुंचे थे कि वहां का हाकिम अली हमीद खान उनका आना सुनकर दिल्ली की ओर भाग गया। अतः सिखों ने ने शहर पर अधिकार कर लिया। आधी से भी अधिक सहारनपुर की सरकार सिंघों के अधिकार में आ गई। सिंघों ने सहारनपुर का नाम बदलकर "भाग नगर" रख दिया। बंदा सिंघ स्वयं तो सहारनपुर ही रहे, और सिंघ छोटे-छोटे जत्थों के रूप में इलाके में निकल गए।

सहारनपुर में यह पता लगा कि बेट (बेहुट) के पीरज़ादे हिंदुओं तथा सिक्खों को तंग कर रहे हैं। बेट में एक धनाढ्य पीरज़ादों का परिवार था जो हिंदुओं को तंग करता था। वह गलियों में गाय काट कर फेंक दिया करते थे। हिंदुओं की पुकार पर बाबा जी ने सहारनपुर से एक जत्था बेट के पीरजादों को ठीक करने के लिए भेजा।

फिर बाबा जी ने जलालाबाद की ओर मुंह किया क्योंकि वहां के फौजदार जलालद्दीन ने कुछ सिंघों को बंदी बना लिया था और उनको कई प्रकार के कष्ट दे रहा था।

राह में सिंघों ने बूड़िए नगर पर अधिकार किया और उसका नाम "गुलाब नगर" रख दिया। गुरबख्श सिंघ को वहां का फौजदार नियुक्त कर दिया।

राह में ननौता नाम का एक और कस्बा पड़ता था जो अमीर होने के कारण बहुत प्रसिद्ध था। ननौते में सिंघों ने पाठनों को लूटा। 300 शेखजादे मुहम्मद अफजल के आंगन में मारे गए। ननौता थोड़े दिनों में ही धधकते कोयलों की ढेरी बन गया इतनी

लूटमार हुई कि उसका नाम "फूटा शहर" ही पड़ गया । यहां के बहुत से गूजर, सिंघ सज गए ।

अब सिंघ जलालाबाद की ओर बढ़ रहे थे । बाबा जी ने जलालुद्दीन के पास अपने दूत भेजे और कहा कि वह कैद किए हुए सिंघों को छोड़ दे । पर जलालुद्दीन ने बंदा सिंघ के दूतों को काफी बुरा भला कहा और स्वयं टक्कर लेने के लिए तैयारी करने लग गया । उसने अपने पोते गुलाम मुहम्मद खान तथा भतीजे हयबर खान के अधीन एक हजार बंदूकची तथा तीरंदाज तथा 400 घुड़सवारों की फौज, सिंघों को जलालाबाद की ओर बढ़ने से रोकने के लिए भेजा । इस फौज के साथ चार पांच हजार ग्रामीण तथा असंख्या लोग आ मिले । बहुत घमासान का युद्ध हुआ जिस में जलालद्दीन के भतीजे – हयबर खान जमाल खान तथा पीर खान मारे गए । सिंघों को भी बहुत नुकसान उठाना पड़ा पर वे रोके न जा सके । उन्होंने जलालाबाद को घेर लिया । सिखों की बहादुरी से घबरा कर जलालुद्दीन ने बादशाह बहादुर शाह, जो कि राजपूताने में था, को पत्र लिखा कि सिखों की बढ़ रही शक्ति को दबाना बहुत ज़रूरी है ।

इस समय पंजाब से खबरें आ रही थीं कि बंदा सिंघ का वहां पहुंचना बहुत जरू है । जलालाबाद के घेरे को बीच में ही छोड़कर सिंघ सरहिंद की ओर चल पड़े ।

(16) माझा तथा दुआबा में हलचल :

बाबा जी की लगातार विजय ने सिखों के हौंसले बहुत बुलंद कर दिये । वे पंजाब में जहां पर भी थे अपने आप को "**रछिया रहित**" समझने लग गये । उन्होंने स्थानीय अधिकारियों को बरखास्त करके प्रबन्ध अपने हाथों में ले लिया । अपनी तहसीलें तथा थाने स्थापित कर लिये ।

लगभग आठ हज़ार सिंघों ने श्री अमृतसर में सम्मेलन किया और गुरमता सुधाया, जिसकी रोशनी में उन्होंने बटाला तथा कलानौर पर आक्रमण किये और पठानकोट तक मार मारी ।

यदि लाहौर की ओर मुंह किया तो शालीमार बाग तक जा पहुंचे और शहर की सीमा तक जा खंडा खड़काया । इन आक्रमणों की लपेट में बहुत से वे मुल्लां मौलवी और कर्मचारी ही आ गये, जिन्होंने आम लोगों को दु:खी करके रखा हुआ था । ये लोग बाहर से भाग कर लाहौर आगये और शहर में सहम छा गया ।

लाहौर का हाकिम असलम खान कुछ डरपोक तबीयत का मालिक होने के कारण चुप रहा । पर मौलवियों तथा मुल्लाओं को सिख शक्ति का उभरना अपने लिए खतरे का कारण लगा । उन्होंने मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं को उभारने के लिए जहाद का नारा लगाया । ईदगाह मसीत के पास हैदरी झंडा गाड़ दिया । मीर तक्की तथा मूसा बेग ने अगवाई की । इन्होंने अपना घर-बार तथा माल असबाब बेचकर सैनिकों, घोड़ों तथा फौजी सामान का प्रबंध किया । खोजा तबके तथा व्यापारियों ने खुलकर आर्थिक सहायता की । गाजी सैयद इशमाइल गाजी बार बेग, शाह इनायत तथा मुलां पीर मुहम्मद प्रचारक भी इस जहाद में शामिल हुए । हिंदुओं में से टोडरमल का एक पोता, पहाड़ा मल का एक पुत्र आ शामिल हुए । उसने खर्च पट्ठे के लिए पैसे, अपने नौकर

तथा कुछ तोपें तथा.जंबूरे सहायता के लिए भेजें । असलम खान ने मीर अताउला तथा फरीदाबाद के जिमींदार मुहिब खान के अधीन 500 सवार और 1000 प्यादों की फौज गाजियों की सहायता के लिए भेजी ।

सिखों को जब मुगलों की इन तैयारियों का पता चला तो वे अपने आप को चार हिस्सों में बांट कर मुसलमानों का सामना करने के लिए निकल पड़े । उनके एक जत्थे ने रावी के किनारे, परगना नष्टाभरली के कानूनगो, भगवंत राय की हवेली को किले की शक्ल दी और गाजियों का इंतजार करने लगे । गाजियों की बाढ़ ने गढ़ी को घेर लिया । गाजियों की संख्या सिखों से कई गुना अधिक थी । अत: सिखों के लिए बाहर निकल पाना भी कठिन हो गया । जहादियों ने दीवारें खड़ी करके ऊपर तोपें जंबूरे चढ़ा दिये और हवेली पर आग बरसाने लग गये । सिखों ने पूरी तरह मुकाबला किया । उन्होंने बुर्जियों, दीवारों के किनारों और दीवारों से दुश्मनों पर वार करने आरंभ कर दिये । जहादी दीवार कूद कर अंदर आने का प्रयास करने लगे तो सिंघों ने तलवारों से उन्हें ठंडा कर दिया । इस प्रकार दोनों ओर से कुछ दिन अपनी-अपनी पुजीशन पर डटे रहे । पर सिखों के पास खाना-पीना समाप्त हो गया । अत: उन्होंने गढ़ी खाली कर दी और गाजियों को चीरते हुए एक ओर निकल गये । गाजी सिखों के इस प्रकार निकल जाने को अपनी हार समझते थे इसलिए उन्होंने लाहौर आकर निहत्थे तथा निराश्रित हिंदुओं पर अत्याचार करके अपने दिलों की आग को बुझाया । मुहम्मद कासिम अपनी पुस्तक "इबरतनामे" में लिखता है, "जहादियों की जमात में से कुछ एक ओछे तथा मूर्ख लोगों ने, जिनमें जन्म-जन्मांतरों की नीचता विद्या के बढ़पन से दूर नहीं हुई थी और जो झूठे मजहबी अभिमान से पागल हुए पड़े थे, शहर के हिंदुओं के साथ बहुत कमीनी तथा नीच हरकतें कीं और सरकारी हाकिमों का भी अपमान करवाया ।"

उधर सिखों ने लाहौर से कुछ मील दूर, कोटला बेगम को केन्द्र बना कर लाहौर के आस-पास आक्रमण करने आरंभ कर दिये । गाजियों ने "कोटला बेगम" की ओर मुंह किया । इस बार सिखों ने गाजियों को करारे हाथ दिखाये । वह (गाजी) मार खा कर वापिस चले गये । रात को उन्होंने भीलोवाल आकर विश्राम किया । पर रात को अचानक सिखों ने उन्हें आ दबोचा । काफी मार-काट हुई । गाजियों का लगभग खातमा ही हो गया । इस विजय के कारण सिखों का सारे इलाके में बोलबाला हो गया ।

दुआबे में भी माझा की तरह सिख जगह-जगह पर उठ खड़े हुए । वे लोग जो सरकारी कर्मचारियों के हाथों तंग आए हुए थे, सिखों के साथ हो गये । सिखों ने कुछ सप्ताह में ही कई कर्मचारी अधिकारी उठा दिये और उनकी जगह पर सिख तहसीलदार और थानेदार नियुक्त किये । बाबा बंदा सिंघ उस समय रंग दुआब (यू. पी) के इलाकों में व्यस्त थे । सिखों ने दुआबे के फौजदार शमसखान को परवाना भेजा कि वह खालसे की अधीनता को स्वीकार कर ले, अत्याचार बंद कर दे और खजाना लेकर हाजिर हो । शमसखान ने मुल्लाओं तथा चौधरियों को भड़काया । परवाने के उत्तर में उसने सिखों को बारूद की पुड़िया तथा कुछ गोलियां भेजीं जिसका तात्पर्य यह था कि उनका मुकाबला इन चीजों से किया जायेगा और वह सिंघों के विरुद्ध तैयारियां करने में व्यस्त हो गया जिसका वर्णन प्रसिद्ध इतिहासकार खाफी खान इस प्रकार करता है :

शमसखान ने करीब चार पांच हज़ार घुड़सवार, 40 हज़ार पैदल तोपची, तीरंदाज तथा अन्य हथियारबंद लड़ाकू, जो जिमींदारों के साथ आये थे, जमा कर लिये। इसके बिना हर कौम के अच्छे-अच्छे आदमी, प्रजा तथा कारीगर जिनमें अधिकतर जुलाहे थे, जान-माल तथा बाल-बच्चों से हाथ धोकर ईश्वरी कलाम (कुरान मजीत) को बीच में रख कर, स्वयं आपस में शामिल हुए। इस प्रकार शमसखान एक लाख से अधिक आदमी जमा करके बड़े दबदबे से सुल्तानपुर से (जो उसकी राजधानी थी) चढ़ाई करके आ गया। सिखों ने सारे हालात बाबा बंदा सिंघ को लिख भेजें और सहायता के लिए लिखा।

सिखों ने "राहो" के पास पुराने भट्ठे को गढ़ी की शक्ल दी और वहां पर एकत्र होने लगे। यहीं पर उनकी जहादियों के साथ झड़पें हुईं। सिखों की संख्या बहुत कप थी। अतः वे समय की नज़ाकत को देख कर रात के समय राहों के किले में चले गये जहां उनका कब्जा पहले से ही था। मुलखिये ने किला घेर लिया। कुछ दिन पश्चातं सिख किला खाली करके बाहर झाड़ियों में जा छिपे तथा मुगल फौज किले पर काबिज़ हो गई। शमसखान अपनी राजधानी सुल्तानपुर को चला गया। दूसरे दिन ही राहों के आस-पास से झाड़ियों में से निकल कर सिखों ने राहों पर आ आक्रमण किया और उन्होंने शत्रुओं को कमर तोड़ हार दी। किले पर फिर अधिकार कर लिया गया।

फिर सिखों ने जालंधर पर अधिकार किया। होशियारपुर भी सिखों के अधीन हो गया। अब सिख सारे पंजाब माझा, मालवा, दुआबा तथा रिआड़की के मालिक बन चुके थे। मैलकम सिखों की चढ़ाई के बारे में लिखता है कि "इसमें कोई संदेह नहीं, यदि बहादुर शाह पंजाब न आता तो सिख सारे हिंदुस्तान को घेर लेते। उसके आने से पासा पलटा और मुसलमान जहादी शक्तियों को एकत्र करके उसने मुकाबला किया।"

इरादत खान कहता है, "दिल्ली में कोई ऐंसा सरदार नहीं था जिसमें दिल्ली से उनके विरुद्ध चढ़ाई करने की दलेरी होती। राजधानी का बड़ा सरकारी हाकिम, आसफ दौला असद खान, डर रहा था, इसलिए शहर के वासी दिखाई दे रहे मुसीबत के बादलों से बचने के लिए अपने बाल-बच्चों तथा माल-असबाब सहित पूर्व की ओर के सूबों की ओर भागने शुरू हो गये थे।"

(17) बहादुरशाह पंजाब में :

बहादुर शाह को, जो कि राजपूताने में था। 1709 के अंत या 1710 के आरंभ में बाबा बन्दा सिंघ की चढ़ाई की खबरें मिलने लग गईं थीं जबकि सिखों ने अभी समाणा ही विजय किया था। जयपुर में बादशाही दरबार की खबरों के सुरक्षित संचय में एक समाचार, जिस पर संवत बहादुरशाही, लिखा हुआ है, पता लगता है कि सरहिंद के वजीरखान के वकील ने खबर भेजने वाले को कहा था–"इस फसाद की आग को मामूली नहीं समझना चाहिए। 70,000 के लगभग सिख सढौरे में कंपू पड़ाव डाले बैठे हैं, गुरु का नाम लेते हैं और कहते हैं कि एक महात्मा (बाबा बंदा सिंघ) आगे से ही हमारे साथ आ मिला है। नवाब निज़ामुल मुलक ने वजीरखान फौजदार सरहिंद की

चिट्ठियां पढ़ कर फैसला किया है कि हिसार का फौजदार वजीरखान के साथ शामिल हो। खबर के अंत में लिखा है, यह बेचारे बहुत लाचारी में हैं। पता नहीं ईश्वर को क्या मंजूर है। "....लाहौर में सूबे के आदमियों के साथ साम्प्रदाय के लोगों ने लड़ाई की है और कइयों को मार मिटाया है और इस समय सारी जगह पर इनका दबदबा है।"

(नोट : उपर्युक्त युद्ध सन् 1709 की गर्मियों में असलम खान, नायर सूबेदार लाहौर के आदेश से पट्टी के अमीन हरि सहाय तथा नुशहिरा पुन्नुआ के चौधरी देवा जाट के साथ अमृतसर में सिघों के साथ हुआ था।)

25 फरवरी १७१० को वजीर खान की सहायता के लिए, अर्ज़ी बहादुर शाह के सम्मुख पेश हुई।

23 अप्रैल 1710 को लाहौर के दीवान की लिखित पहुंची, जिस पर हुक्म हुआ कि आस-पास के फौजदारों को लिखा जाये कि आवश्यकता के समय एकत्र होकर इसकी सहायता करें।

ऐसे समाचार मिलने पर 24 मई को बहादुर शाह ने हुक्म जारी किया कि राजधानी (दिल्ली) के मुतसद्दियों को लिखा जाये कि 8 लाख रुपया अलाहाबाद के सूबेदार खान जान बहादुर तथा अब्दुला खान को सहायता के तौर पर दिया जाये और अफजल खान दिल्ली जाकर खान (जान) बहादुर सैयद अब्दुला खान, शमशेर खान, कुमाऊं के जिमींदार चेत सिंघ अनूप सिंघ तथा ईसा खान आदि को बन्दा सिंघ के विरुद्ध भेजे।

सिघों की चढ़ाई से बहादुर शाह इतना भयभीत हुआ कि राजपूताने में बागियों की धुनाई करने का काम बीच में ही छोड़ कर वह 17 जून 1710 को अजमेर से दिल्ली की ओर चल पड़ा और उसने निजामुल मुलक (गवर्नर) आसफ दौला असदखान को आदेश दिया कि वह सिखों के विरुद्ध चढ़ाई करने के लिए सेना एकत्र करे और अवध के सूबेदार खानदौरान के फौजदार मुहम्मद अमीन खान, चीन बहादुर, अलाहाबाद के नाजम खान जान तथा बारे के सैयद अब्दुला खान को इस मुहिम में शामिल होने के लिए आदेश भेजे।

28 जुलाई, 1710 को परागपुर के मुकाम से सांभर के मोकूफ हुए फौजदार फिरोजखान मेवाती, रुस्तमदिल खान के भतीजे सुल्तान कुली खान तथा कुछ और सरदारों की कमान में सिघों के विरुद्ध एक अग्रिम फौज भेजी गई और मेवाती को सिपाही भर्ती करने के लिए 50,000 रुपये अग्रिम दिये। इस समय मुहम्मद अमीन खान (दीन बहादुर) और कमरूदीन खान, मुरादाबाद से पहुंच गये। 14 अगस्त को बारे के सैयद अब्दुला खान को नारनौल से पंजाब को भेजा गया। मुसलमानों को यह भी भय हो रहा था कि बादशाही डेरे में दाहड़ी वाले हिंदुओं में कोई सिख ही न हो, इसलिए 29 अगस्त, 1710 को हुक्म दिया गया कि बादशाही कार्यालयों में जितने भी हिंदू नौकर हैं, अपनी दाहड़ियां कटवा दें।

26अगस्त को बाबू मुहम्मद खान को खिल्लत इनाम देकर हुक्म किया कि कुमाऊं के राजा को बंदा सिंघ के विरुद्ध ले जाये और उसको बादशाह के सम्मुख पेश किया जाये। बृजराज नामक हिंदू को भी खिल्लत देकर उसके साथ भेजा गया।

इस प्रकार प्रबंध करते हुए बहादुर शाह अपने डेरे सहित पंजाब की ओर बढ़ रहा था। 12 अक्तूबर 1710 को वह सोनीपत पहुंच गया।

इसी समय सिखों की शक्ति बिखरी हुई थी। अधिकतर सिंघ तो बाबा जी के साथ उत्तर प्रदेश गये हुए थे। बाकी पंजाब में माझा, दुआबा तथा रिआड़की में जगह-जगह पर राजभाग प्राप्त करने तथा प्रबंध करने के काम में लगे हुए थे। सरहिंद में केवल प्रबंध लायक फौज ही रखी हुई थी। यह फौज मुकाबले लायक नहीं थी। दूसरी ओर मुसलमान पूरी तैयारी से हिंदुस्तान भर में से एकत्र हो कर आये थे। अतः ऐसे समय सिखों की विजय की कल्पना भी नही की जा सकती। फिर भी सिखों ने अपनी जानों की आहुति देकर मुकाबला कियाऔर खालसा गौरव को बरकरार रखा।

फिरोजखान मेवाती को शाहबाद, मुस्तफाबाद तथा सढौरा पर हमला करने के लिए कहा गया। इन शहरियों की रक्षा के लिए सिख फौज तो है ही नहीं थी, अतः आक्रमण का सारा भार, प्रबंध चला रहे सिंघों–बाबा बिनोद सिंघ तथा शाम सिंघ जैसे अग्रणियों पर आ पड़ा। तरोड़ी (करनाल) के समीप अमीनगढ़ के मैदान में दोनों सेनाओं का मुकाबला हुआ। महाबत खान ने पहल की, सिखों ने उसकी फौजों को मात दे दी। इस दशा को देख कर फिरोजखान गुस्से में पागल हो कर सिख फौजों पर टूट पड़ा। इस इलाके ने मुगलों का साथ दिया। सिखों की हार हुई और 300 सिखों के सिर बादशाह (बहादुरशाह) के पास भेज गये।

मगल फौजों का आना सुनकर तथा अमीनगढ़ में सिखों की हार का पता लगने के पश्चात् शमसखान सरहिंद पर आक्रमण करने के लिए चल पड़ा। उसने दुआबा में से काफी मुलखइया एकत्र कर ली थी। बायजीद खान तथा उमराखान भी उसकी सहायता के लिए पहुंच गये। सरहिंद का गवर्नर सरदार बाज सिंघ वहां पर है ही नहीं था। सरदार सुखा सिंघ तथा शाम सिंघ ने आगे बढ़ कर मुकाबला किया परन्तु सिखों को अपनी थोड़ी संख्या और बारूद तथा हथियारों की कमी के कारण सरहिद के किले में पनाह लेनी पड़ी। शमसखान ने आगे बढ़ कर किले पर अधिकार कर लिया। इस युद्ध में मारे गये 300 सिखों के सिर, चार गड्डे, एक झंडा, दो निशान चार बाण और दो नेजे शमशखान ने बहादुर शाह को, जो उस समय सढौरे में था, भेजे। बादशाह ने शमसखान को खिल्लत (इनाम) भेजी।

जब सरहिंद का किला छिन गया तो सिखों ने लौहगढ़ के किले में टिकाना किया। बाबा बंदा सिंघ जी भी पहुंच गये। बहादुरशाह ने रुस्तम दिल खान तथा फिरोज खान को आगे भेजा। पर वे अभी (दो) कोस ही गये होंगे कि सिखों ने अचानक हमला कर दिया। यह हमला इतना तेज़ था कि मुगल फौजें हार गई और खंडित हो गई। काफी खान इस लड़ाई का वर्णन इस प्रकार करता है, "फकीरों वाले वेश में सिखों ने शाही लश्कर को भयभीत कर दिया। बादशाही फौजों में मरे तथा मर रहे लोगों की संख्या इतनी अधिक थी कि कुछ समय के लिए तो ऐसा प्रतीत होता था कि लड़ाई हारी जा रही है।" कामावर खान अपनी पुस्तक तजकिरातु सलातीन में लिखता है, "मैं

शहिजादा रफी-उ-शान की सेना में उस समय वहां मौजूद था और मैंने अपनी आंखों से देखा कि इन मरदूद सिखों में से हरेक जवान छलांगें लगा-लगा कर खाई में से निकलता और बादशाही लश्करियों को ललकारता और बड़ी बहादुरी के जौहर दिखा कर गाजियों की तलवार के नीचे बेदरेग जान दे देता ।" इस समय बादशाही तथा नामवर अमीरों की फौजों ने सब ओर से हल्ला करके रुस्तम तथा असफंद यार के कारनामे मात कर दिये । बड़ी भयानक लड़ाई हुई । सिखों के दो सरदार तथा ढाई हज़ार व्यक्ति मारे गये । विजयी फौज में से फरोज खान मेवाती का एक भतीजा मारा गया और पुत्र घायल हो गया । बहादुर शाह ने बाद में पूरी सहायता भेजी तथा सिख लौहगढ़ की ओर हट गये । लौहगढ़ को चार पांच दिनों के पश्चात् 60 हज़ार के लगभग फौजों ने घेर लिया जिसकी कमान शहजादा रफी-उ-दीन के हवाले थी ।

मुनीम (मनइम) खान हालात का अंदाजा लेने के लिए किले के समीप पहुंचा तो सिखों ने तोपों की बौछाड़ कर दी । मुनीम खान ने भी जल्दी में आक्रमण कर दिया । शहजादा रफी-उ-शान तथा रुस्तम दिल खान उसकी सहायता के लिए आये । सारा दिन युद्ध होता रहा । दोनों ओर से बहुत नुक्सान हुआ । पापी सुचा नंद का पुत्र भी मारा गया । रात को सिखों ने फैसला किया कि बंदा सिंघ गढ़ी छोड़ जायें । अतः गढ़ी में कमान सरदार गुलाब सिंघ के हवाले करके आधी रात को तोप चलाई गई और बाबा जी नाहन की पहाड़ियों में चले गये । सुबह शाही फौज ने लौहगढ़ पर कब्ज़ा कर लिया । सरदार गुलाब सिंघ को गिरफ्तार करके बहादुर शाह के पेश किया गया । लौहगढ़ की खुदाई की गई जिससे पांच लाख रुपया और तीन हज़ार चार सौ सोने की अशरफियां मिलीं ।

(18) बाबा बंदा सिंघ जी का पहाड़ों की ओर जाना :

बाबा जी का बच कर निकल जाना मुसलमानों के लिए एक बहुत बड़ी हार थी । मुनीम खां ने गुस्से में नाहन के राजा भूप प्रकाश को गिरफ्तार करने का आदेश दिया । भूप प्रकाश को कैद कर के बहुत कष्ट दिये गये, और सरदार गुलाब सिंघ सहित पिंजरे में बंद कर के दिल्ली भेज दिया गया ।

10 दिसम्बर, 1710 को बहादुर शाह ने महाबत खान को कहा कि शाह जहानबाद के आस-पास के फौजदारों को शाही हुक्म लिख दें कि नानक नामलेवा जहां कहीं भी मिल जाएं कत्ल कर दिये जाएं ।

बाबा जी पहाड़ों में चुप करके नहीं बैठे, बल्कि उन्होंने सिख संगत ने नाम हुक्मनामे भेजे कि वे गुरु साहिबान के बताये हुए रास्ते पर चलें और तैयार बर तैयार रहें । बहुत से सिख कीरतपुर में एकत्र हो गये । बाबा जी ने पहाड़ी राजाओं को सही करने का प्रोग्राम बनाया । सब से पहले भीम चंद को ठीक किया गया जो दसम पातशाह के समय से गुरु घर के साथ शत्रुता करता था । भीम चंद ने बिलासपुर में मुकाबला किया पर उस की तकड़ी हार हुई जिस के फलस्वरूप मंडी का राजा सिद्ध सैन तथा अन्य राजा लोग नजराने ले कर पेश हुए । चंबा के राजा उदय सिंघ ने तो राज घराने की लड़की का विवाह बाबा जी से कर दिया जिसकी गोद में अजय सिंघ का जन्म हुआ ।

लौहगढ़ खाली करने के तीन महीने के पश्चात् फरवरी-मार्च 1711 में, बाबा जी पहाड़ों में से रायपुर, बहिराम के पास निकल आये और उन्होंने गुरदासपुर की ओर हाथ पैर मारने आरम्भ कर दिये।

बहादुरशाह को बाबा जी की कारवाइयां की खबरें तो पहुंच रही थीं, पर कोई पक्का ठिकाना न पता होने के कारण वह बेबस था। अमीन खान तथा रुस्तमदिल खान बाबा जी को पकड़ने के लिए बहुत भागदौड़ कर रहे थे। शमसखान तथा उसका सहायक बायजीद खान भी बाबा जी की खोज कर रहे थे। रायपुर के पास इन्होंने बाबा जी के साथ टाकरा भी किया पर शमसखान सरदार बाज सिंघ के हाथों मारा गया। बायजीद खान बुरी तरह घायल हो गया और चार दिनों के पश्चात मर गया।

बहिरामपुर के पश्चात् कलानौर पर आक्रमण किया गया और शहर पर अधिकार कर लिया। बहुत से मुसलमान भी सिखों की सेना में शामिल हो गये। इस तथ्य का वर्णन भगवती दास हरकारे ने अपने खबरों के पर्चे में किया है जो पर्चा 28 अप्रैल, 1711 को बादशाह के पास पहुंचा। उसमें यह भी लिखा है कि बाबा जी ने मुसलमानों की दिहाड़ी निश्चित कर दी है और बांग तथा नमाज़ पढ़ने की छूट भी दी है। फिर बाबा जी बटाले पर आ पड़े। उनका आना सुनकर कई लोग तो अपना घर-घाट छोड़ कर बाल-बच्चों सहित लाहौर और दूसरे सूबों की ओर निकल गये। पर एक शेख अहमद नामी व्यक्ति ने बाबा जी का मुकाबला करने के लिए कुछ लोगों को एकत्र कर लिया जिन्होंने बाबा जी का टाकरा किया परन्तु हार गये। अब बाबा जी का विचार लाहौर की ओर रुख करने का था पर उनके पीछे शाही फौज लगी हुई थी। अतः आप रावी पार करके जम्मू की पहाड़ियों में चले गये।

जब जम्मू के ध्रुवदेव जसवालिये को बाबा जी का जम्मू के इलाके में आने का पता चला तो उसने मुगलों को इस बात की सूचना भेजी। मुहम्मद अमीन खान, रुस्तमदिल खान, असगर खान तथा ईसखान ने मिल कर बाबा जी का पीछा किया और इन्होंने सिंघों के साथ दो बार घमासान की लड़ाई की। सिंघ मुगलों के हाथ न आ सके और पहाड़ियों में अलोप हो गये।

बहादुर शाह लाहौर में ही था कि मुसलमानों के दो साम्प्रदायों—सुन्नी और शिया में सख्त लड़ाई हो गई। बहादुर शाह स्वयं शिया था और उसने सुन्नियों को सख्त सजाएं दीं। इन्हीं हालातों में बहादुर शाह पागल हो गया और उल-जलूल फुर्मान जारी करने लग गया जैसे शहर के कुत्तों को मार दो, फकीरी अलख समाप्त कर दो, आदि आदि। अंत में 17-18 फरवरी 1712 की बीच की रात को उसकी मृत्यु हो गई।

बहादुर शाह की मृत्यु के पश्चात राजगद्दी के लिए झगड़े आरंभ हो गये। जहानदार शाह ने अपने भाइयों को कत्ल करके तख्त पर कब्जा कर लिया। परन्तु 10 महीनों के पश्चात् ही फरूखसीअर राजगद्दी पर बैठ गया।

(19) सढौरे पर पुनः अधिकार :

लाहौर में जब राजगद्दी के लिए झगड़ा हो रहा था तो सुनहरी अवसर जान कर बाबा जी ने फिर कलानौर और बटाला अपने अधिकार में कर लिये। कुछ ही दिनों में

उन्होंने लौहगढ़ और सढौरा पर कब्जा कर लिया और एक किला भी बनवाया। ग्यारह महीनां में ही सिखां ने अपनी ताकत फिर संगठित कर ली।

फरूखसीअर ने तख्त पर बैठते ही सिखों की ओर विशेष ध्यान दिया। जैनदीन अहमद खान (जैन खान) को सढौरे पर कब्जा करने के लिए भेजा गया। परन्तु सिखों ने उसका सफल न होने दिया। फिर अबदूस समद खान ने दिलेरी-जंग का खिताब देकर लाहौर का सूबेदार नियुक्त किया गया और पुत्र जकरिया खान को जम्मू का फौजदार बनाया। दोनों बाप-बेटे को सिख शक्ति को दबाने का आदेश दिया गया।

अबदुससमद खान तथा जैनदीन अहमद खान दोनों की फौजों ने सढौरे को घेर लिया। बाबा जी उस समय लौहगढ़ में थे। वे सढौरे में घिरे हुए सिखों की हर तरह से सहायता कर रहे थे। गढ़ी के अंदर के सिख मुकाबला करते रहे और मुगल फौजें समय-असमय आक्रमण करती रहतीं। अबदुस समद खान ने घेरा सख्त कर दिया और 700 पौढ़ियां बनाने का आदेश दिया जिनकी सहायता द्वारा फौज किले में उतारी जा सके। इस प्रकार दो माह तैयारी करने में लग गये परन्तु सितम्बर के तीसरे सप्ताह में सिख अचानक ही गढ़ी से बाहर आ गये और मुगल फौजों को चीरते हुए लौहगढ़ चले गये।

सढौरे की गढ़ी गिरा कर अबदुससमद खान अर्द्ध नवम्बर में लोहगढ़ में आ गया। वहां पर उसको बहुत निराश होना पड़ा। क्योंकि सिख पहले ही लोहगढ़ छोड़ कर जम्मू की पहाड़ियों की ओर चले गये थे।

चनाब के किनारे, पहाड़ियों में बाबा जी ने अपना डेरा बनाया और नवम्बर, 1713 से फरवरी, 1715 तक यहीं पर रहें। यहीं पर उनकी दूसरी शादी वजीराबाद के क्षत्रीय शिवराम की सपुत्री बीबी साहिब कौर के साथ हुई जिसकी गोद में रणजीत सिंघ नामक पुत्र का जन्म हुआ। जिसका खानदान अब तक चला आता है।

पंथ प्रकाश और त्वारीख गुरु खालसा" में यह लिखा हुआ है कि बाबा बंदा सिंघ ने अपने आप को गुरु कहलवाना शुरू कर दिया था और अमृतसर में गद्दी लगा कर बैठते थे। परन्तु यह बात बिल्कुल ही गलत है क्योंकि सरकारी या गैर-सरकारी अभिलेखों में इस बात का बिल्कुल उल्लेख नहीं है। हालात इतने खराब थे कि वे अमृतसर जा ही नहीं सकते थे।

इसी प्रकार माता सुन्दर कौर जी और फरूखसीअर के बीच में हुई कही जाती बातचीत या कोई लिखा-पढ़ी, जिसका वर्णन ज्ञानी ज्ञान सिंघ जी ने किया है, बिल्कुल मनघड़ंत बात है। डा. गंडा सिंघ जी जिन्होंने पंजाबी, हिंदी, अंग्रेजी तथा फारसी की सब पुस्तकों का अध्ययन किया है जिनमें बाबा जी का वर्णन है, लिखते हैं-"उस समय के अभिलेखों, समकालीन पुस्तकों, सरकारी रोजनामचों, तजकरियों या बादशाही खानदानी इतिहास स्वजीवनियों आदि में कहीं पर भी उपरोक्त बातचीत या समझौते का वर्णन नहीं आता है।" वास्तव में बात यह है कि बाबा जी की शहीदी के चार-पांच साल बाद सिखों के दो ग्रुप हो गये थे-बंदई खालसा और तत्त खालसा। त्तत खालसा के पक्ष को ठीक सिद्ध करने के लिए ज्ञानी ज्ञान सिंघ जी ने उपरोक्त घटना जोड़ी नज़र आती है।

(20) बाबा जी की गिरफ्तारी :

मार्च 1715 के आरंभ में बाबा बंदा सिंघ जम्मू की ओर से मैदान में आ निकले। कलानौर में जहादियों के साथ एक झड़प हुई परन्तु वे सिखों की मार न सह सके। कलानौर को अपने अधीन करके बाबा जी ने यहां पर अपना थाना बिठा दिया।

फिर बाबा जी ने बटाला की ओर मुंह किया। वहां का फौजदार मुहम्मद दाइम फौजें लेकर टकराव के लिए शहर से बाहर आया। लगभग 6 घंटे तक खूब लड़ाई हुई और दोनों ओर का काफी नुक्सान हुआ परन्तु मुसलमान हार गये। अत: बटाले पर भी सिखों का अधिकार हो गया।

बाबा जी के इस प्रकार प्रकट होने से फर्रुखसीअर को बहुत गुस्सा आया। उसने अबदुस समद खान को डांटा, कमरुदीन खान को पंजाब भेजा। बख्शी अफरासिआब खान, मुजफर खान, राजा उदित सिंघ बुंदेले, राजा गोपाल चंद भदवाड़िये, दलपतबुंदेले के पुत्र पृथी चंद तथा और बहुत से हिंदू तथा मुसलमान सरदारों को आदेश हुआ कि फौजें तैयार करके अबदुस समद खान की सहायता करे। यह आदेश मिलने के पश्चात् गुजरात का फौजदार मिर्जा अहमद खान, एमनाबाद का फौजदार इरादतमंद खान, औरंगाबाद और पसरूर का नूर मुहम्मद खान, बटाले का शेखमुहम्मद दायम, हैबतपुर पट्टी का सयद हजीफ अलीखान, कलानौर का सुहराब खान, कांगड़े का राजा हमीर चंद कटोरीआ, हरदेव जम्मू से लाहौर के पास आकर एकत्र हुए।

बाबा जी कलानौर तथा बटाले के बीच कोट मिर्जाजान गांव में एक कच्ची गढ़ी बना रहे थे। अभी नींवों की खुदाई ही हो रही थी कि अबदुस समद खान और आरिफबेग की कमान में उपरोक्त सारी फौजों ने मिले जुले रूप में हमला कर दिया। सिखों ने पूरी तरह टाकरा किया और प्रथम आक्रमण में ही मुगलों को बुरी मार मारी। खाफी खान कहता है "काफिर इतने झुंझलाकर लड़े कि उन्होंने इस्लामी लश्कर पर लगभग नियंत्रण ही पा लिया और उन्होंने बार-बार बहादुरी दिखलाई। परन्तु कहां मुट्ठी भर सिख और कहां मुगलों तथा पहाड़ी राजाओं की टिड्डी दल ! फिर सिखों के पास सिर छिपाने को कोई जगह भी नहीं थी। अत: वे गुरदासपुर की ओर चले गये। गुरदास नंगल नाम के गांव के पास भाई दुनी चंद के अहाते को कच्ची गढ़ी की शक्ल देकर सिखों नें मुगलों का टाकरा किया। बादशाही लश्कर ने इस गढ़ी को घेर लिया। मुगलों की संख्या 24 हज़ार के करीब थी। घेरा इतना सख्त कर दिया गया कि अन्न का एक दाना भी अंदर नहीं जा सकता था। अबदुससमद खान तथा उसके पुत्र ज़करिया खान ने अपनी फौजों के साथ कई हमले किये परन्तु वह गढ़ी पर कब्जा न कर सके। इबरतनामे का लेखक मुहम्मद कासिम मुगल फौजों की ओर से लड़ रहा थ। वह लिखाता है जहुनमी सिखों के बहादुरी और दलेरी के कारनामे हैरान कर देने वाले थे। प्रतिदिन या तीन बार 40-50 कलमुंहे सिख अपने जानवरों के घास चारे के लिए गढ़ी में से बाहर निकलते और जब बादशाही लश्कर की फौजें उनको रोकने जातीं तो वे अपने तीरों, राम जंगियों तथा छोटी तलवारों से मुगलों की धुनाई कर देते और अलोप हो जाते। सिखों का इतना भय और सिख नेता की जादूगरियों का इतना भय बैठ हुआ

था कि फौज के कमांडर ईश्वर से दुआएं मांगते कि वे कोई ऐसी करामात करे बंदा गढ़ी में से निकल कर भाग जाये।"

इतने समय में कमरुदीन की फौज आ गई। घेरा इतना तंग कर दिया गया कि गढ़ी तोप की मार की हद में आ गई। गढ़ी को एक ओर से अबदुस समद खान ने घेरा, दो दिशाएं कमरुदीन तथा ज़करिया खान के हवाले कीं, चौथी दीवार फौजदार तथा जिमींदारों के सुपुर्द की। परन्तु सिख फिर भी पूरे उत्साह से लड़ते रहें। वे दुश्मनों के कैंपों पर दिन-रात गोलियां तथा तीर बरसाते रहे। बाबा बिनोद सिंघ तो कई बार गढ़ी में से बाहर आ जाते और शाही लश्कर के बाज़ार में से खाने-पीने की आवश्यक वस्तुएं लेकर फिर वापिस चले जाते। मुगलों ने बहुत यत्न किये परन्तु वह बाबा बिनोद सिंघ को पकड़ न सकें। इस प्रकार कई मास तक घेरा जारी रहा और दोनों ओर का काफी नुक्सान हुआ। परन्तु सिखों के पास रसद पानी समाप्त हो गया। उन्होंने पेड़ों के पत्ते तथा मिट्टी खाकर उदर पूर्ति की। ऐसी दशा में भी वे चढ़दी कला में रहें और दुश्मनों के साथ दो हाथ करते रहे। सिखों की इस दशा का वर्णन ज्ञानी ज्ञान सिंघ जी ने पंथ प्रकाश में इस प्रकार किया है :

करयो नहीं था अधक जखीरा, बंदे गढ़ी मझारी।
सेर पाव की कहां कहानी, मासा अंन ना मिलही।
खान पीज़ किछ नज़र न आवे, मिटी को सिंघ गिलही।
कई दिवस भूख देखे सिंघन् पाते, ब्रिछन खाये।
बाहर दल तुरकी बहुत उतरयो, पेश कछू नहि जाए।

इर्विन कहता है, "हर किस्म के जानवर तक का मास सिखों ने कच्चा ही खा लिया क्योंकि जलाने के लिए ईंधन भी नहीं रहा था।" खाफी खान कहता है कि सिखों ने अपने पटों के मास चीर कर एक दूसरे को खिलाये।

परन्तु एक और घटना हो गई जिसने सिखों की हार को निश्चित बना दिया। वह थी फूट, बाबा बिनोद सिंघ तथा बंदा सिंघ में मतभेद। बाबा बिनोद सिंघ गढ़ी को छोड़ जाना ठीक समझते थे जबकि बाबा बंदा सिंघ गढ़ी में और ठहरना उचित समझते थे। बात बहुत बढ़ गई। अंत में बाबा बिनोद सिंघ के लड़के बाबा काहन सिंघ ने बीच बचाव करके आपसी झगड़ा समाप्त किया। परन्तु बाबा बिनोद सिंघ अपने साथियों सहित गढ़ी छोड़ कर चले गये और शत्रुओं को चीरते हुए दूर निकल गये।

इस प्रकार कई प्रकार के कष्टों को सहते हुए भी सिखों ने मुगलों का आठ महीने तक सामना किया। परन्तु भूख के कारण कई सिख तो चढ़ाई कर गये और कईयों को पेचश आदि बीमारियां लग गईं। युद्ध में लड़ना तो एक ओर रहा कई सिख तो चल फिर भी नहीं सकते थे। परन्तु वे अंत तक डटे रहे। तभी तो कामवर खान लिखता है, "जहनमी सिख आप और उसके आदमियों ने उस सारी फौजी ताकत का टाकरा किया जो कि महान मुगल हकूमत आठ महीने तक उनके विरुद्ध एकत्र कर सकी।"

अंत में 7 दिसम्बर, 1715 को शाही सेनाओं ने गढ़ी पर कब्जा कर लिया। 300 के करीब सिखों को गढ़ी में शहीद कर दिया गया। सिखों के पेट इस लालच के कारण चीर दिये गये कि शायद उन्होंने अपने उदर में सोने की मोहरें रखी हों। इसके पश्चात् उनके सिर काट कर घास फूंस से भर दिये और नेज़ों पर लटका दिये गये। गुरदास नंगल का गांव और भाई दुनीचंद का अहाता (कच्ची गढ़ी) गिरा दी गई। यहां पर अब एक हवेली है, जिसको बंदे वाली थेह कहा जाता है। सिखों की गिरफ्तारी का वर्णन करते हुए मुसलमान इतिहासकार कामवर खान लिखता है, यह किसी की अक्लमंद या बहादुरी का परिणाम नहीं था बल्कि ईश्वर की मेहरबानी थी कि ऐसा हो गया नहीं तो सब को ही पता है कि स्वर्गवासी बहादुरशाह ने अपने चारों साहिबजादों और असंख्य बड़े-बड़े अधिकारियों सहित इस बगावत को मिटाने के यत्न किये परन्तु यह सब निश्फल हो गये और अब वह काफिर सिख और उसके साथी भूख के अधीन होने के लिए मज़बूर कर दिये गये।"

(21) कैदी सिखों का दिल्ली में जलूस :

अबदुस समद खान सिखों को कैद करके लाहौर ले गया। मुसलमान ऐसा ख्याल करते थे कि बाबा जी में करामाती शक्तियां हैं। इसलिए वे बाबा जी से बहुत भयभीत हो रहे थे। उनको भय था कि बाबा जी कैद में से कहीं लुप्त न हो जायें। इसलिए उनके पैरों में बेड़ियां, टांगों में छल्ले, कमर के आस-पास संगल तथा गले में कुंडल डाले हुए थे और इनको लकड़ी के डंडों के साथ बांधा हुआ था। इस प्रकार बाबा जी को अच्छी तरह जकड़ कर लोहे के पिंजरे में डाला हुआ था। इस पिंजरे की निगरानी दो मुगल सिपाही, हाथ में नंगी तलवारें लिये कर रहे थे। बंदा सिंघ के जत्थेदारों और नामवर आदमियों को बेड़ियां डाली हुई थीं और उन्हें लंगड़े, निर्जीव तथा मरियल गधों, टूटओं या ऊंठों पर चढ़ाया हुआ था। उनके सिरों पर टोपियां डाली हुई थीं। इनके आगे ढोल तथा बाजा बजता आ रहा था और नेज़ों पर टंगे हुए सिर, मुसलमानों ने उठाये हुए थे। कैदियों के पीछे बादशाही अमीर फौजदार और हिंदू राजा अपनी सेनाओं सहित जा रहे थे। इस प्रकार इस जलूस को शहर भर में फेरा गया ताकि लोगों को भयभीत किया जा सके और मुगलों का दबदबा बिठाया जा सके।

लाहौर से सिखों को दिल्ली ले जाने की ड्यूटी ज़करिया खान की लगाई गई परन्तु गिरफ्तार किये गये सिखों की संख्या उसको कम प्रतीत हुई। उसने सारे इलाके में सिखों की खोज शुरू कर दी। फौजदार और चौधरी गांव-गांव में घूमे और उन्होंने अनेकों बेगुनाह लोगों को पकड़ कर (सिरों की संख्या बढ़ाने के लिए) ज़करिया खान के पास भेज दिया। कुछ ही दिनों में हज़ारों सिख, जिनका गुनाह केवल सिख धर्म के धारणकर्ता तथा गैर-मुस्लिम होना था, कत्ल कर दिये गये। इनके कटे हुए सिरों से 700 गड्डे भर लिये गये जिनको कैद किये हुए सिखों सहित दिल्ली की ओर रवाना किया गया। इस बात का वर्णन कर्निंघम इस प्रकार करता है, "बंदा सिंघ और दूसरों की बहुत दुर्गति से, जो जाहिल और अर्द्धजंगली विजेता ही कर सकते हैं, दिल्ली को रवाना किया गया। बंदा सिंघ की तरह सब को पैरों, हाथों, कमर के आस-पास से जंजीरों से

जकड़ा हुआ था और दो-दो या तीन-तीन करके, टांगों पर लाया हुआ था। सरहिंद में उनको बाज़ारों में से घुमाया गया जहां पर लोग उनको मजाक करते और गाली निकालते थे। सिखों ने यह सब कुछ शब्द (गुरबाणी) पढ़ते हुए धैर्य से सह लिया।"

27 फर्वरी, 1716 को कैदी सिखों के आगराबाद पहुंचने की खबर बादशाह फरूखसीअर को मिली। उसने मुहम्मद अमीन खान को आदेश दिया कि वह सिख नेता, बंदा सिंघ तथा उसके साथियों को आगराबाद से बादशाही महल तक जलूस की शक्ल में लाने का प्रबंध करे। 29 फरवरी, 1716 को सिखों को दिल्ली शहर में लाया गया और उनका जलूस निकाला गया। जलूस में सबसे आगे 2,000 सिखों के सिर (जिन को घास फूस से भरा हुआ था) नेजों पर टंगा हुआ था और उनके बाल हवा में उड़ रहे थे। फिर एक मरी हुई बिल्ली बांस पर टांगी हुई थी—यह बताने के लिए कि सिखों के किले में बिल्ली तक को भी जिंदा नहीं रहने दिया गया। इसके पश्चात् सिखों से भरे हुए 700 गड्डे थे उसके पश्चात् एक हाथी झूमता हुआ आ रहा था जिस पर बाबा बंदा सिंघ जी को कैद किया हुआ था। उनका मजाक उड़ाने के लिए, उनके सिर पर तिल्ले की कढ़ाई वाली लाल पगड़ी बांधी हुई थी, और तिल्ले से कढ़ाई की गई अनारों के फूलों वाली गाढ़े लाल रंग की पोशाक डाली हुई थी। पिंजरे की निगरानी एक दूरानी अधिकारी मुहम्मद अमीन खान, नंगी तलवार हाथ में लेकर कर रहा था। उसके पश्चात् 740 सिख दो-दो करके, ऊंठों पर बांधे हुए आ रहे थे, उनका एक हाथ जकड़ा हुआ था, सिरों पर कागज़ या भेड़ की खाल की नोकदार टोपियां रखी हुई थीं, जिनको शीशे के मनकों से सजाया हुआ था। उनके मुंहों पर कालिख पोती हुई थी। कुछ नामवर सिखों को भेड़ों की खाल डाली हुई थी, जिसके बाल बाहर की ओर थे, ताकि सिख रीछों की तरह लगें। सबसे बाद में तीन बादशाही अमीर घोड़ों पर आ रहे थे-मुहम्मद खान कमरूदीन खान तथा ज़करिया खान।

"इबारत नामें" के कर्ता "मिर्जा मुहम्मद हारिसी ने यह जलूस अपनी आंखों से देखा था। वह नमकमंडी से बादशाही किले तक जलूस के साथ आ गया था। वह लिखता है, "मुसलमान, सिखों की इस दुर्दशा को देखकर खिल्लियां उड़ा रहे थे, परन्तु उनका बदनसीब, सिखों को हर कोई सब्र तथा संतोष में देख सकता था। उनके चेहरों पर उदासी या अधीनता का कोई मामूली चिन्ह या प्रभाव भी नहीं था, बल्कि वे तो बहुत ताज़ा, ऊंठों पर सबे शब्द पढ़ने में मग्न थे।" बाज़ारों या गलियों में यदि उनको कोई कहता कि अब तुम्हें कत्ल कर दिया जायेगा तो वे उत्तर देते—करो कत्ल। हम कत्ल होने से कभी नहीं डरते हैं। यदि डरते होते तो तुम्हारे साथ ऐसा क्यों करते ? हमें तो केवल भूख, दाने-पानी तथा आटे ने तुम्हारे हाथ फंसा दिया है, नहीं तो हमारे कारनामों का तुम्हें पता ही है। "तबसिरतु नाज़िरीन" का लेखक सैयद मुहम्मद भी वहीं था। वह कहता है, "उस समय मैंने इशारा करके एक सिख को कहा कि यह घमंड क्या और नखरा क्या ?—तो उसने अपना हाथ माथे पर रखा और अपनी किस्मत की ओर इशारा किया। उस समय मुझे उसका अपने अंदर की भावना व्यक्त करने का ढंग बहुत अच्छा लगा।"

कामवर खान लिखता है, "**बिना किसी उदासी या शर्मिंदगी के वह शांत चित और प्रसन्नचित्त और प्रसन्नमुख जा रहे थे और शहीदों की मौत मरने के लिए इच्छावान दिखते थे।**"

जब यह जलूस लाल किले पहुंचा तो बाबा बंदा सिंघ जी, म० बाज सिंघ, भाई फतेह सिंघ तथा अन्य अग्रणी सरदारों को मीरिआतिश इबराहीन उदीन खान की निगरानी में त्रिपोलिया भेज दिया गया और बाकी के सिखों को, जिन की संख्या 694 थी, कत्ल करने के लिए शहर के कोतवाल सरबराह खान के हवाले कर दिया गया। बाबा बंदा सिंघ की घरवाली तथा उसके चार साल के बच्चे अजय सिंघ तथा उसकी खिलावी को शाही जनानखाने का प्रबंधक दरबार खान नाज़िर ले गया।

सिखों की गिरफ्तारी की खुशी में बादशाह फरूखसीअर ने खुले दिल से इनाम बांटे। मुहम्मद अमीन खान को छः खिल्लतें, एक जीगा कलगी तथा एक सुनहरा काठीवाला घोड़ा इनाम में दे दिया। कमरूदीन खान तथा ज़करिया खान को एक-एक खास खिल्लत, जीगा कलगी, घोड़ा तथा हाथी बख्शीश में मिलें। ज़करिया खान ने गुरदास नंगल के किले में से लाये गये रुपये तथा कुछ सोने के गहने आदि शाही खजाने में जमा करवा दिया दिये।

सिखों के किले में से पकड़े गये हथियार बहुत कम थे (जिन की संख्या डा. गंडा सिंघ की पुस्तक "**बंदा बहादुर**" के 160 पृष्ठ पर दी हुई है)। यह लोगों के लिए अचम्भे का कारण थी। **कामवर खान** कहता है, "**यह सचमुच हैरान कर देने वाली बात है कि इतने थोड़े से सामान सहित सिखों ने अपने जमाने की सब से बड़ी हकूमत का एक लम्बे समय तक डट कर मुकाबला किया।**"

(22) सिघों की शहीदियां :

5 मार्च, 1716 को दिल्ली के त्रिपोलिया दरवाज़े की ओर के चबूतरा कोतवाली के सामने सरबराह खान की देख-रेख में सिखों का कत्लेआम शुरू हुआ। 100 सिख रोज कत्ल किये जाते थे। इस प्रकार 7 दिन, यह कहर भरा कत्लेआम जारी रहा। गुरु के अनन्य श्रद्धालु सिखों ने दुःख तथा कष्ट सहन करते हुए कुर्बानियां तो दे दीं पर किसी ने भी सिखी से मुंह नहीं मोड़ा। कलकत्ते से आये ईस्ट इंडिया कम्पनी के दो आदमियों—**सर जौहन सरमैन और एडवर्ड स्टीफैनसन** ने सिखों के इस कत्लेआम को आंखों से देखा। वह कंपनी के प्रधान के नाम लिखी अपनी 10 मार्च 1716 की चिट्ठी (नं० 12) में लिखते हैं, "**यह कोई अनोखी बात नहीं कि किस धैर्य तथा दृढ़ता से वे** (कत्ल किये जा रहे सिख) **अपनी किस्मत को स्वीकार करते थे और अंत तक यह पता नहीं लगा कि किसी एक ने भी अपना नया धारण किया हुआ धर्म त्याग दिया हो।**"

जिस किसी ने भी सिखों को इस प्रकार दृढ़ता से कुर्बानी देते हुए देखा या सुना वह सिखों की तारीफ करने से न रह सका। इतिहासकार **इर्विन** लिखता है "क्या हिंदुस्तानी तथा क्या यूरोपीयन सारे ही दर्शक उस हैरान कर देने वाले धैर्य तथा दृढ़ता की प्रशंसा करने में सहमत थे, जिससे इन लोगों ने अपनी किस्मत को स्वीकार किया। देखने वालों के लिए इन का अपना धर्मनेता के लिए प्रेम तथा भक्ति बहुत आश्चर्यजनक थे। उनको

मौत का कोई भय नहीं था और वह जल्लाद को मुक्तिदाता कह कर बुलाते थे।" "सीअरल मुताखरीन" का कर्ता गुलाम हुसैन कहता है, "सबसे अधिक अनोखी बात यह है कि लोग केवल कत्ल होने के समय ही दृढ़ता नहीं दिखाते थे बल्कि कत्ल होने के लिए पहल करने के लिए आपस में झगड़ते थे और जल्लादों को प्रार्थनाएं करते और वास्ते डालते थे।"

सिखों के सिर काट देने के पश्चात् धड़ों के ढेर लग जाते थे और रात के समय गड्डों पर लाद कर शहर से बाहर पहुंचा दिये जाते थे इबरतनामे का कर्ता मिर्जा मुहम्मद हारिसी लिखता है—मैं कत्ल शुरू होने के दूसरे दिन 23 रब्बी-उल-अव्वल (6 मार्च) को कत्ल का तमाशा देखने के लिए मौके पर गया पर जब मैं वहां पहुंचा तो कत्लों का काम समाप्त हो चुका था और धड़ अभी तक वहीं सूर्य की आग जैसी धूप में लहू-लुहान हुए तथा धूड़ में पड़े थे।"

इन शहीदियों के समय की सिखों की वीरता की कई गाथाएं बहुत हैरान करने वाली हैं। उनमें से एक का वर्णन कर देना ही काफी रहेगा। इस घटना का थोड़ा सा वर्णन खाफीखान ने अपनी पुस्तक "मुतखबल लुबाब" में किया है। वह लिखता है—

कई लोग ऐसी कहानियां सुनाते हैं, जिनको अकल सत्य नहीं मान सकती। पर इन पन्नों के लेखक ने जो कुछ भी अपनी आंखों से देखा है हम वह लिखते हैं। इन लोगों के कत्ल के समय एक लड़का भी था जो अपनी विधवा मां का इकलौता बेटा था। उसका नया-नया ही विवाह ही हुआ था। दूसरे सिखों की तरह अपने पुत्र के सिर कूक रही मौत की बात सुनकर वह वृद्ध माई दीवान रतन चंद के पास पहुंची और उसकी सहायता के सैयद अबदुला तथा फरूखसीअर के पास जा कर फरियाद की। बादशाह ने इस हुकम की आड़ में कि जो सिख जा धर्म त्याग देगा उसको छोड़ दिया जाएगा, इस बुढ़िया ने शायद रतन चंद के सिखलाने पर प्रार्थना की है कि मेरा पुत्र तो सिखों के हाथों कैद में था, वह स्वयं सिख नहीं है। उनकी कैद में ही वह यहां आ गया है और अब बेगुनाह ही उनके साथ मारा जाएगा। फर्खसीअर को उस माई पर तरस आ गया और उसने एक अधिकारी को हुकम दे कर भेजा कि इस माई के पुत्र को छोड़ दिया जाये। वह माई रिहाई का आदेश लेकर शहीदियों वाली जगह पर उसी समय पहुंची जिस समय जल्लाद लहू से भरी तलवार ले कर उस लड़के पास खड़ा थी। माई ने हुकम कोतवाल को दिया। वह लड़के को बाहर ले आया। और कहा "जा तुझे छोड़ दिया गया है पर उस लड़के ने रिहा होने से इंकार कर दिया और ऊंची-ऊंची कहने लगा "मेरी मां झूठ बोलती है, मेरी मां झूठ बोलती है। मैं दिलों-जान से गुरु का विश्वास तथा अनन्य सिख हूं। मुझे मेरे गुरभाइयों के पास पहुंचाओ।" मां की दर्द भरी चीखों तथा आंसुओं भरी मिन्नतों तथा सरकारी अधिकारियों द्वारा समझाने वाली बातें उसको सिखी सिदक से डिगा न सकीं। वह कत्लगाह को मुड़ गया और शहीद होने के लिए अपनी गर्दन जल्लाद के सामने जा झुकाई जो पलक मारते ही कट गई और वह धर्मात्मा सिख बच्चा सच्चे शहीदों में आ दाखिल हुआ।"

इन कत्लों के तीन मास बाद तक शांति रही जिसका कारण मर जर जोहन सरमेन तथा जेडवर्ड स्टीफैनसन ने अपनी उपरोक्त चिट्ठी में इस प्रकार किया है : "उस (बंदा सिंघ की और उसके बहुत से साथियों की) ने जिंदगी बढ़ा दी है ताकि उसके खजाने और उसके सहायकों का पता लगाया जा सके। इसके पश्चात् उसको भी कत्ल कर दिया जाएगा।"

(23) बाबा जी की शहीदी :

अंत में वह दिन भी आ गया जब बाबा बंदा सिंघ जी को अनेकों कष्ट देने के पश्चात् शहीद कर दिया गया। 9 जून, 1716 को सुबह होते ही बंदा सिंघ, उस के बच्चे अजै सिंघ और साथियों सरदार बाज सिंघ, भाई फत्तेह सिंघ, आली सिंघ, सरदार गुलाब सिंघ आदि को दिल्ली के लाल किले में से निकाल कर सरबराहर खान कोतवाल और ईबराहीन उदीन खान मीरि आतिश की निगरानी में जलूस की शक्ल में कुतबमीनार के पास ख्वाजा कुतुबद्दीन व बख्तियार काकी के रोज़े के पास पहुंचाया गया। इस समय भी बाबा बंदा सिंघ जी को बेड़ियों से जकड़कर, किले की कढाई वाली लाल पगड़ी तथा तिल्लेदार पोशाक पहनाई गई थी और उनको हाथी पर चढ़ाया हुआ था। दूसरे 26 सिंघ जंजीरों के साथ जकड़े हुए, उन के पीछे जा रहे थे। बाबा जी को हाथी से उतार कर जमीन पर बिठा दिया गया और उनको इसलाम या मौत में से एक चुनने को कहा गया। बाबा जी ने सच्चे विश्वास, सिदकवान सिंघों की तरह मौत को खुशी-खुशी स्वीकार किया।

उन्हें कहा गया कि वह अपने चार वर्ष के बच्चे अजय सिंघ को कत्ल करे। बाबा जी ने इंकार कर दिया। फिर क्या था, **जल्लाद ने एक लम्बे छुरे से बच्चे के टुकड़े-टुकड़े कर दिए, और उसका तड़पता हुआ दिल निकालकर बंदा सिंघ जी के मुंह में ठूंस दिया।** शाबास है उस मर्द को कि वह यह सब कुछ अडोल रह कर, वाहिगुरु की रज़ा समझ कर, सह गया।

अब मुगलों को विश्वास हो गया था कि बाबा जी को किसी प्रकार भी धर्म से विचलित नहीं किया जा सकता।

इसलिए उनको कष्ट देने आरंभ किए गए। जल्लाद ने सब से पहले उनकी दाईं आंख निकाल दी, फिर बाईं। फिर बायां पैर काट दिया और दोनों हाथ भी शरीर से जुदा कर दिए। धधकती हुई लाल, गर्म लोहे की चिमटियों से उनके शरीर की बोटी बोटी खींची और तोड़ी गई। अंत में उनका सिर धड़ से अलग कर दिया गया और बंद-बंद काट दिए गए। इन सब कष्टों के समय, बाबा जी बिल्कुल अडोल तथा शांत चित रहे। **अलफेसटनके शब्दों में "उन्होंने परिपक्व सिदक से समय के अन्याय तथा अत्याचारों को दूर करने के लिए परमात्मा द्वारा एक साधन होने की हैसीयत में प्रसन्न चित्त प्राण त्याग दिए।"** बाकी सिंघों को भी इसी प्रकार कष्ट दे-दे कर शहीद कर दिया गया।

इसी समय बाबा बाज सिंघ ने जो बहादुरी दिखलाई, वह एक सिख की सहज अवस्था की जीती-जागती मिसाल है। बादशाह फरूखसीअर ने सिंघों को कत्ल करने

से पूर्व अपने पास बुलाया और कहा : "मैंने सुना है तुम्हारे में बाज सिंघ नामक एक सिख बहुत बहादुर है और उस पर गुरु की अपार कृपा है । "यह सुन कर सरदार बाज सिंघ ने उत्तर दिया, "मैं ही हूं बाज सिंघ, गुरु का तुच्छ सेवक ।" बादशाह ने कहा "तूं तो बहुत बहादुर था । पर अब तो तेरे से कुछ भी नीं हो सकता । सरदार बाज सिंघ तुरंत बोल उठे "यदि आप मेरी बेड़िया खोल दो तो अब भी मैं आपको कुछ तमाशा दिखला दूंगा ।" बादशाह के हुकम करने पर उनकी बेड़ियों को खोल दिया गया । सरदार बाज सिंघ अभी हिलने लायक ही हुए थे कि वे बाज की तरह बादशाह के कारिंदों पर टूट पड़े ओर दो तीन को अपने हाथों में पड़ी हुई बेड़ियों से ही पार बुला दिया । फिर उन्होंने एक शाही अमीर (सरदार) की ओर मुंह किया और उसका भी काम तमाम कर दिया होता यदि बादशाही कारिंदे उसको पकड़ न लेते ।

इस प्रकार बाबा जी के साथ पकड़ कर लाये गए सभी सिखों ने सिखी की ज्योति को जगाए रखने के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी ।

(24) बाबा बंदा सिंघ जी का व्यक्तित्व :

बाबा बंदा सिंघ जी का जीवन पढ़ने के पश्चात उनकी जो तस्वीर उभर कर सामने आती है, वह है, गुरु के आदेशों पर फूल चढ़ाने वाले एक गुरु सिख की तस्वीर । वह दीन-दुखियों के दुख दूर करने के लिए सदा तत्पर रहा करते थे ।

बाबा जी शरीर के पतले और दरमयाने कद के थे और उनका रंग हल्का गेहुंआ था । उनका चेहरा बहुत रोहब वाला था । उन की तीखी तथा चमकदार आंखें, दुश्मनों के मनों पर भी उनकी उच्च अवस्था मानसिक का प्रभाव डालती थीं ।

बाबा जी को कद तथा शौष्ठव के पक्ष से चाहे बहुत डील डौल वाला नहीं कहा जा सकता, पर वे बहुत चुस्त तथा फुर्तीले थे । युद्ध के मैदान में बड़े-बड़े तकड़े शूरवीरों को भी अपने समीप नहीं लगने देते । वे अच्छे निशानेबाज थे । बंदूक उनका मन-भावना हथियार था पर वे तलवार और तीर कमान के भी धनी थे । आप एक बहुत अच्छे सवार थे और कई दिन लगातार बिना थकावट के सवारी कर सकते थे ।

रणनीति में भी बहुत निपुण थे । वे मुगल, जिन से सारा हिंदुस्तान भय खाता था, बाबा जी के छोटे-छोटे जत्थों के आगे हथियार फेंक देते थे । सढौरे, समाणे तथा सरहिंद की लड़ाइयां, बाबा जी की कुशल रणनीति की जीवंत उदाहरण हैं ।

बाबा जी केवल फौजी कमांडर ही नहीं थे, उन के मन में सिखी के प्रचार की भी तीव्र लगन थी । जब भी उनके पास कोई आता या खालसा दल में शामिल होता तो बाबा जी उस के लिए अरदास करते और उसको नाम सुमिरन का उपदेश देते । उन से प्रभावित हो कर कई अपराधियों ने भी सिख धर्म धारण किया । उनमें से एक सरकारी कर्मचारी दीनदार खान जो सरहिंद के आस पास के गांव का ही था, सरहिंद का अखबार नवीस मीर नसीरुद्दीन और अमृतसर के पास पंचबड़ गांव का छजू जाट आदि प्रसिद्ध हैं, जिन्होंने अमृत पान करके अपना नाम दीनदार सिंघ, मीर नसीर सिंघ और छज्जा सिंघ रख लिया । पर बाबा जी शक्ति के जोर से लोगों का धर्म बदलने के वे सखत विरुद्ध

थे। उनकी सेना में बहुत भारी संख्या में मुसलमान भी रहे जिन को नमाज पढ़ने की पूरी स्वतंत्रता थी।

बाबा बंदा सिंघ का एक सफल राजा प्रबंधक भी था। मुखलिसगढ़ को अपना राजधानी के लिए चुनना, उनका एक बहुत सूझवान फैसला था। फिर लोहगढ़ की रक्षा के लिए और 5 किले बनवाना भी प्रबंध की दृष्टि से एक अच्छा फैसला था।

बाबा जी पहले शासक थे जिन्होंने हिंदुस्तान में अपने अधीन क्षेत्रों में से जिमींदारी प्रणाली को उड़ा कर रख दिया। बड़े-बड़े जिमींदारों से, जो जबरदस्ती लोगों की जमीन के मालिक बन बैठे थे, जमीन असली मालिकों, कारिंदों तथा किसानों को दिलवाई गई।

यह उनके अच्छे राज्य प्रबंधक का ही परिणाम था कि हिंदुस्तान में सदियों से पद-दलित तथा नीच कहे जाने लोगों ने भी स्वतंत्रता का आनंद लिया। इस के प्रति **इर्विन** के विचार हम पहले लिख चुके हैं।

बाबा जी यह समझते थे कि दशम पातशाह ने उन को लोगों के दुःख निवारण के लिए भेजा है। इसलिए उसने अत्याचार के विरुद्ध जहाद जारी रखा और अपने राजकाल के समय सब के साथ न्याय किया। छोटा बड़ा उनके लिए सब बराबर थे। बड़े से बड़े सरदार को भी उसके जुर्म के बदले, वे तोप से उड़ा देने से पीछे नहीं हटते थे, ताकि दूसरों को कान हो जाएं। **बंसावली नामे का कर्ता केसर सिंघ** (छिब्बर) बाबा जी के वचनों को इस प्रकार कलमबद्ध करता है :

राजे चुली निआऊ की , इकुं गिरंथ विच लिखिआ लहिआ।
निआउं न करो त नर्क जाएं। राजा होइ के निआऊं कमाऐ।।43।।
पुरख बचन मुझ को ऐसे है कीता। मारि पापी, मैं वैर पुरख दा लीता।
जे तुसी उस पुरख के सिख अखाओ। तां पाप अधर्म अन्याय न कमाओ।।44।।
सिख ऊबारि, असिख संघारो। पुरख दा व्कहिआ हिरदे धारो।
भेखी, लंपट, पापी चुनि मारो।।45।।

बाबा बंदा सिंघ जी एक सच्चे सिदकवान सिंघ थे। जीवन के अंत तक गुरु साहिबान के लिए उनका निश्चय तथा भक्ति अटल तथा अडोल रहे। उनके राज्य के समय की मोहरें तथा सिक्कों पर अंकित शब्द उनके गुरु नानक-गुरु गोबिंद सिंघ जी के प्रति अपार श्रद्धा की जीति जागती यादगारें हैं। वे अपने राजभाग की सब प्राप्तियों का स्रोत गुरु साहिबान को ही समझते थे। वे सिखी पर इतने दृढ़ थे कि शहीदी के समय अनेकों प्रकार के दुःख कष्टों को उन्होंने हंस कर सहन कर लिया। यदि वे धर्म का त्याग कर देते तो उनके जीवन के सभी सुख, ऐशोआराम मिल सकते थे परन्तु उन्होंने भयानक कष्टों भरी मौत को स्वीकार कर के गुरु भक्ति की अति उत्तम मिसाल संसार के सामने रखी।

गुरसिखी-रहित जीवन पद्धति के वे पक्के धारणकर्ता थे और अन्य सिखों को भी रहित पर दृढ़ रहने के लिए प्रेरित करते थे। वे एक **हुकमनामे** में लिखते हैं :
मेरा हुकम है जो खालसे की रहित रहेगा तिसकी गुरु बाहुड़ी करेगा।

यह बात याद रखने वाली है कि बाबा जी ने भी अपने आप को गुरु नहीं कहलवाया और न ही दरबार साहिब में गुरु की जगह पर गदेला लगा कर बैठने की बात में कोई सत्यता है । वे उम्र भर अमृतसर जा ही नहीं सके । अतः यह गुरु बनने वाली बात निर्मूल सिद्ध हो जाती है । इसके विपरीत गुरु गोबिंद सिंघ जी की ओर से सौंपे गए मिशन के ऊपर भी वे जीवन के अंतिम समय तक परिपक्व रहे और उसके लिए सब कुछ कुर्बान कर गए । उन्होंने शहीदी के समय तक, सिखी केसों श्वासों के संग निभाई ।

यह बड़े दुःख की बात है कि ऐसे संत सिपाही, अद्वितीय जरनैल तथा सिख राज्य की नींव रखने वाले महान व्यक्ति के साथ बहुत से इतिहासकारों ने बहुत अन्याय किया है । जहां सिख इतिहासकारों ने बाबा जी का जीवन, प्रचलित साखियों के आधार पर निरोल श्रद्धावश हो कर लिखा है कई जगहों पर कौम की आपसी फूट का सारा दोष उनके सिर पर मढ़ कर उनके व्यक्तित्व को छुटियाने की गलती भी की है, वहां गैर सिख इतिहासकारों ने जिन में हिंदू तथा मुसलमान दोनों ही हैं, दसम पातशाह को असफल सिद्ध करने की भावना से और मुसलमानों की हार तथा सिंघों की विजय चढ़दी कला से चिढ़ कर बाबा जी के जीवन को जानबूझ कर गलत रंग दे कर पेश किया है ।

जहां तक सिख इतिहासकारों की बात है, सरदार रतन सिंघ भंगू से ले कर भाई संतोख सिंघ तक, सब ने सुनी-सुनाई बातों को सत्य मान कर इतिहास लिखा है । किसी ने भी पड़ताल करके इतिहास लिखने की ज़रूरत नहीं समझी । ज्ञानी ज्ञान सिंघ भी इस धारा में बह गए ।

सरदार रतन सिंघ भंगू ने तो तत्व खालसा तथा बंदई खालसा के तथाकथित झगड़े को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर पेश किया है । बंदा सिंघ को हराने के लिए माता सुंदरी जी और फरखसीअर के बीच हुई (फर्जी) बातचीत की चर्चा करके सरदार रतन सिंघ भंगू ने सिख इतिहास के साथ घोर अन्याय किया है । प्रसिद्ध सिख इतिहासकार डा० गंडा सिंघ जी ने जिन्होंने बेहद मेहनत के साथ बाबा जी का जीवन इतिहास लिखा है, ने उस समय के सरकारी कागज पत्र बहुत गौर से देखे हैं और बाबा जी के समस्त समकालीन तथा उस समय के मुसलमान हिंदू तथा अंग्रेज इतिहासकारों की अभिलेखों को अच्छी तरह से देखा है । उनको माता सुंदरी जी तथा बहादुरशाह की मुलाकात के बारे में कोई भी अभिलेख नहीं मिल सका ।

एक आर्य समाजी सज्जन, भाई परमा नंद के बीर बैरागी नाम की अपनीं पुस्तक में एक सोची समझी योजना के अधीन श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को छुटियाने एक प्रयास किया है । उसने यह सिद्ध करना चाहा है कि जब गुरु गोबिंद सिंघ जी अपने मिशन में फेल हो गए तो उन्होंने एक हिंदू बैरागी का सहारा लिया ।

इस हिंदू बैरागी के कारण ही सिख, दोषियों को सजा दे सके और पंजाब में सिख राज्य स्थापित कर सके । पर यह बात समझ में नहीं आती कि भाई परमानंद इस तथ्य को क्यों उजागर नहीं कर सके कि जिंदगी में पूरी तरह हारे हुए इन्सान डरपोक, अहिंसा के पुजारी तथा आत्मिक शान्तिके लिए दर-दर भटकते हुए "हिंदू बैरागी" को फिर

जीवन दान देने वाले, खंडा और तेग देने वाले, केवल गुरु गोबिंद सिंघ जी ही थे। दसम पातशाह को मिलने से पहले वह किसी अन्य गुरु—जानकी प्रसाद, राम दास और जोगी औघड़ नाथ धारण कर चुके थे और किसी ने भी उन को मानसिक भटकन से छुटकारा नहीं था दिलवाया। यदि बंदा सिंघ गुरु गोबिंद सिंघ जी के संपर्क में न आते तो वे सारी उम्र माधोदास ही रहते, बंदा सिंघ बहादुर न बन सकते।

मुसलमान इतिहासकारों ने तो बाबा जी के जीवन के साथ बहुत अन्याय किया है क्योंकि बाबा जी ने मुसलमानों के अजेय होने के विश्वास को तोड़ कर रख दिया था। आकड़खान तथा अपने आप को खुदा समझने वाले मुगल नवाबों का घमंड मिट्टी में मिला दिया था, नवाब वजीर खान जैसे मजबूत नवाबों को अगली दुनिया में भेज कर और उनके किए अत्याचारों का सूद सहित हिसाब चुकता किया था। सरहिंद जैसे, उत्तरी भारत के सब से मजबूत शहर को मिट्टी में मिलाकर रख दिया था और अपना राज्य स्थापित किया अपनी राजधानी लौहगढ़, बना ली, खालसा का सिक्का जारी किया इसलिए मुसलमान इतिहासकारों के दिल में बाबा जी के लिए ईर्ष्या तथा शत्रुता कूट-कूट कर भरी पड़ी थी। जिसका इज़हार उन्होंने अपनी लिखतों में किया। बाबा जी के समकालीन मुसलमान लिखारियों ने बाबा जी के विरुद्ध तो प्रचार करना ही था पर पिछली सदी के मुसलमान लिखारी **सईयद लतीफ** ने तो सब को मात कर दिया है। वह अपने गुस्से को उगलता हुआ लिखता है "चाहे बहादुरी एक सम्मानीय गुण है और आने वाली नस्लें बहादुरी के गुणों का सम्मान करती हैं और उस का प्रभाव ग्रहण करती हैं, पर दैत्य (बाबा बंदा सिंघ) के कारनामे एक और प्रकार की मिसाल है जिसकी किसी के साथ तुलना नहीं की जा सकती है। उसने जो सफललाएं प्राप्त की हैं वह कोई बहादुरी के कारनामे नहीं थे बल्कि नफरत करना तथा बेरहमी से कत्ल करने की वारदातें हैं। वह निर्दोष मुसलमानों का खून बहाते नहीं थकता था। उसका एक ही ध्येय था कि खून बहाया जाए। आज जब उसका नाम लिया जाता है तो जबर जुल्म तथा खून के प्यासे की भयानक शक्ल सामने आ जाती है।"

मुहम्मद लतीफ शरीफ लोगों की बोली को छोड़ कर गालियां निकालने तक आ गया है। उसने यह सोचने की जरूरत ही नहीं समझी कि बाबा जी की "बे-रहमी के साथ कत्ल करने की वारदातों के क्या कारण थे। लतीफ इस तथ्य को जानबूझ कर आंखों से ओझल कर गया है कि बाबा जी ने इतनी सख्ती इसलिए की थी, क्योंकि वे सदियों से होते आ रहे मुगलों के अत्याचारों को बंद करना चाहते थे और एक ऐसा राज्य स्थापित करना चाहते थे जिस में सब सुखी हों, किसी को किसी का भय न हो। जब लतीफ बाबा जी द्वारा मुगलों को ठीक करने को अत्याचार कहता है तो हम उससे पूछते हैं कि सहनशीलता के धारणकर्त्ता शांति स्वरूप साहिब श्री गुरु अर्जुन देव जी को अनेक प्रकार के कष्ट दे कर शहीद करने को, बाबा दयाला जी को गर्म पानी में आलुओं की तरह उबालने को, भाई मती दास जी को आरे से चीर कर शहीद करने को, साहिब श्री गुरु तेग बहादुर जी को शहीद करने, 6 तथा 8 साल के मासूम बच्चों को अनेक प्रकार के दुःख तथा कष्ट दे कर शहीद करने को, **वह क्या कहेगा ? क्या यह सब पुन्य के काम**

थे ? क्या इस्लाम यही सिखलाता है ? क्या मुहम्मद साहिब का यही मिशन था ? पर लतीफ साहिब क्या करते । उन्होंने तो सांप्रदायिकता की ऐनक लगा रखी थी ।

मुसलमान इतिहासकारों का प्रभाव अंग्रेज लिखारियों पर भी पड़ा हुआ प्रतीत होता है । उनमें से कईयों ने बिना पूछताछ किए उस समय पर उपलब्ध आधी सामग्री के आधार पर ही बाबा जी के बारे में अपनी राय कायम की हैं । कनिंघम भी ऐसे इतिहासकारों के प्रभाव से बच नहीं सका । वह कहता है, जब गुरु स्वयं निराश हो गए तो उन्होंने बंदा सिंघ को पंजाब में एक नई तरह की लहर चलाने के लिए भेजा । कनिंघम के इस दूशण का उत्तर हम पहले ही दे चुके हैं । जब भाई परमानंद के विचारों पर चर्चा की है ।

जब मैलकम यह कहता है कि "गुरु गोबिंद सिंघ ने एक वैरागी को अपने पुत्रों की शहादत का बदला लेने को भेजा" तो हमें उसके इतिहास के ज्ञान पर स्वतः ही हंसी आ सकती है । यदि बाबा जी का आशय केवल साहिबाजादों की शहीदी का बदला लेना ही होता तो वह सरहिंद को विजय करके या उजाड़कर ही अपना कार्यक्रम बंद कर देते परन्तु ऐसा नहीं हुआ है ।

आरंभ से ही उनके हमलों पर दृष्टिपात करो । समाणा के पश्चात सढौरे पर किए आक्रमण का एक कारण हिंदुओं पर हो रही सख्ती भी थी । हिंदुओं को अपने धर्म-कर्म करने की मनाही थी । वे मुर्दों को फूंक भी नहीं सकते थे । पायन के राम-राइयों की धुलाई, क्रपूरी मलेर कोटले, सहारनपुर के इलाकों आदि पर किये हमले आम लोगें की भलाई के लिए ही थे और जबर, जुल्म का खात्मा करने के लिए ही थे । इनका मनोरथ किसी प्रकार भी साहिबजादों की शहीदी का बदला लेना नहीं था ।

चाहे बाबा जी का इतिहास लिखने वाले मुसलमान तथा कुछेक हिन्दू इतिहासकारों ने जानबूझ कर पक्षपात से काम लिया है और अंग्रेज़ इतिहासकारों ने अनजाने में गलत बयान किये हैं, पर फिर भी कुछ ऐसे लिखारी हुए हैं जिन्होंने बाबा जी का सही मूल्यांकन किया है । उनमें से कुछेक के विचार पाठकों के ध्यान योग्य हैं । जो यहां प्रस्तुत किये जाते हैं ।

सैयद लतीफ ने बाबा जी का इतिहास कितने पक्षपात से लिखा है, यह उस रिपोर्ट से भली प्रकार प्रकट हो जाता है जो बहादुरशाह को 28.4.1711 को मिली थी और उसके कारिंदों ने ही कलानौर से भेजी थी । रिपोर्ट में लिखा हुआ है—"उसने (बाबा जी ने) वचन दिया है और इकरार किया है कि मैं मुसलमानों को कोई दुःख नहीं देता । चुनांचि जो भी मुसलमान उस की ओर रजूह होता है, वह (बंदा सिंघ) उसकी दिहाड़ी और तनखाह निश्चित करके उसका ध्यान रखता है, और उसने आज्ञा दी हुई है कि नमाज़ और खुतबा वैसे (मुसलमान) चाहें पढ़ें । चुनांचे पांच हजार मुसलमान उसके साथी बन गए और सिखों की फौज में बांग और नमाज़ की ओर से सुख पा रहे हैं ।" यह रिपोर्ट लतीफ के इस कथन की कि "वह निर्दोष मुसलमानों का खून बहाता नहीं थकता था" पूरी तरह खंडित ही नहीं करती बल्कि उसकी बातों का विरोध भी करती है ।

जहां लतीफ, बाबा जी को ज़ालिम और दैत्य जैसे विशेषणों से संबोधित करता है वहीं एक और मुसलमान लेखक मुहम्मद सफी बाबा जी के किरदार और व्यक्तित्व से प्रभावित हो कर लिखता है—वह (बाबा जी) अपने नेता गुरु गोबिंद सिंघ के साथ कई बातों में मिलता था। उसका व्यक्तित्व का समूचा प्रभाव, उसकी चमकती आंखों में तीखी नज़र, उसके दुश्मनों पर भी असर छोड़े बिना नहीं रहती थी। (पुस्तक मिरात-उल-वारिदात।)

लतीफ और मैलकम ने बाबा जी पर जो दोष लगाए हैं उनका उत्तर मैगरेगर ने बहुत अच्छी तरह दिया। मैगरेगर बंदा सिंघ को एक महान जनरैल कह कर सम्मानित करता है। वह कहता है, बंदा बहादुरों तथा जनरैलों में ऊंचा स्थान रखता है। उसका नाम ही पंजाब से बहादुर मुसलमानों में दहशत फैलाने के लिए काफी था।

वैसे तो अनेक इतिहासकारों ने बाबा जी के पक्ष में लिखा है। पर हमारे विचार में इस सदी के इतिहासकार, श्री गोकल चंद नारंग ने बाबा जी का सही मूल्यांकन किया है। नारंग साहिब बाबा जी को आदर्शवादी सिख के रूप में देखते हैं। वे सिख जिस की कल्पना गुरू नानक साहिब ने की थी वह सिख जो दस गुरु साहिबान के महान परिश्रम तथा संघर्ष का परिणाम था। वे कहते हैं "(कहानी का) प्लाट गुरु गोबिंद सिंघ जी ने बनाया ऐक्टर भी गुरु गोबिंद सिंघ ने स्वयं बुद्धिमानी से तैयार किए, पर यह बंदा सिंघ ही था जिसने एक्टरों को लोगों के सामने पेश किया और अच्छी तरह उनसे पार्ट अदा करवाए। गुरु गोबिंद सिंघ जी ने बीज बोया तथा फसल बंदा ने काटी।"

एक और स्थान पर गोकल चंद नारंग बहुत सुंदर लिखते हैं : "गुरु जी ने नियम बनाए, बंदा सिंघ ने उन नियमों को व्यावहारिक रूप देने के लिए जान की बाजी लगा दी। गुरु गोबिंद सिंघ ने मुगलों के अजेय होने की घमंड को तोड़ा और बंदा सिंघ ने मुगलों को पंजाब की धरती से मार मिटाया।"

यदि बाबा जी के समूचे जीवन को ध्यान में रखते हुए गोकल चंद नारंग के ये शब्द पढ़े जाएं तो इन शब्दों की सत्यता स्वतः ही सामने आ जाती है। गुरु गोबिंद सिंघ का आशय इस हिंदुस्तान में से एक जालिम, निर्दयी तथा अन्यायकारी मुगल साम्राज्य को समाप्त करके यहां सही अर्थों में धर्म का राज्य स्थापित करना था जिसमें किसी को दूसरे से भय न हो, प्रत्येक को धार्मिक स्वतंत्रता हो, बलवान आदमी कमजोरों पर अत्याचार न करें बल्कि जहां तक हो सके उन की सहायता करें। गुरु साहिब ने अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए खालसा पंथ की नींव रखी और इसी खालसा पंथ की छाया में धर्म के राज्य की उन्होंने कल्पना भी की इन सिखन को देऊं पातशाही, याद करें हमरी गुरिआई और कहीं को सरदार बनाऊं तबै गोबिंद सिंघ नाम कहाऊं। बाबा बंदा सिंघ नंदेड़ से चले, समाणे और सढौरे के आकड़खान हाकिमों की धुनाई करने के पश्चात जगाधरी और कपूरी में से अत्याचारों का अंत करके सरहिंद आ पहुंचे। सरहिंद उस समय वह शहर था जिससे सिख सब से अधिक नफरत किया करते थे क्योंकि यहां का जालिम तथा नीच हाकिम वजीरखान माता गुजरी तथा छोटे साहिबजादों का कातिल था। सरहिंद पर कहरभरा हमला किया गया। ईंट से ईंट बजा दी गई। वजीर खान का सदा

के लिए अंत कर दिया गया। महल-मंडल अत्याचारों का शिकार होते आ रहे थे, विजेताओं की शक्ल में पंजाब के सब से बड़े मुगलों के गढ़, सरहिंद में दाखिल हुए।

यहीं पर बस नहीं, मुखलिसगढ़ के किले को लौहगढ़ का नाम दे कर बाबा जी ने उसको अपनी राजधानी बनाया। लौहगढ़ उस समय सदियों से दलित हो रहे लोंगों का उत्तरी भारत में एकाएक सहारा था। यहीं बैठ कर राम-राइयों की धुनाई के मनसूबे बनें। यहीं से ही दीन-दु:खियों के दर्द मिटाने के लिए बाबा जी और सिंघ उत्तर प्रदेश में गए। सरहिंद की जीत के पश्चात् खालसा संवत भी जारी किया गया। खालसे के नाम का सिक्का भी चला। गुरु गोबिंद सिंघ साहिब के स्वप्न साकार हुए।

सच्ची बात तो यह है कि बाबा बंदा सिंघ दसवें पातशाह का सहकार श्री गुरु गोबिंद सिंघ साहिबान का परिश्रम का फल था। उनके स्वप्नों की मूर्ति था। बाबा जी जहां सिदकवान सिख योग्य जरनैल थे, वहीं वे एक उत्तम धार्मिक नेता तथा सुंदर, कुशल व बुद्धिमान राजप्रबंधक थे। बाबा जी के मुकाबले का व्यक्तित्व सिख इतिहास में कोई-कोई ही हुआ है। जब तक दुनिया पर सिखी रहेगी, तब तक बाबा जी का अद्वितीय व्यक्तित्व सिक्खों को प्रकाश स्तम्भ का काम देता रहेगा।

(25) संक्षिप्त जीवन :

जन्म	: 16 अक्तूबर, 1670 राजौरी, रियासत पूंछ
पिता	: श्रीरामदेव भारद्वाज राजपूत।
पहला नाम	: लछमणदास।
बाद के नाम	: माधो दास, बाबा बंदा सिंघ बहादुर।
गुरू धारण किए	: (1) जानकी प्रसाद–राजौरी में, (2) साधूराम–राम थंमण, ज़िला लाहौर में, (3) जोगी ओघड़ नाथ–नासिक, दक्षिण में। (4) श्री गुरु गोबन्द सिंघ जी–नांदेड़, दक्षिण में।
आक्रमण किये	: समाणा–नवंबर, 1709 सढौरा–शुरू 1710 चापड़ चिड़ी (सरहिंद के पास)–12 मई, 1710, सरहिंद मारी–14 मई, 1710, उत्तर प्रदेश मे (सहारनपुर ननौता, जलालाबाद आदि)– जून तथा जुलाई, 1710, लोहगढ़–दिसम्बर, 1710, नवम्बर–1713–गुरदास नंगल–अप्रैल, 1715 से दिसम्बर, 1715.
विवाह	(1) : राजा चंबा के घराने की लड़की से। (2) वजीरबाद के एक क्षत्रीय की लड़की से।
संतान	: दो पुत्र अजय सिंह और रणजीत सिंह।
शहीदी	: 9 जून, 1716.

******

हलूणा

"गुरसिखो, जो आप की इच्छा है आप वही करो, पर आपका गुरू आप से कभी प्रसन्न नहीं होगा । मैंने पढ़ी है आप की सिख हिस्टरी । मैंने पढ़ी है आप की गुरबाणी, जितना भी मुझे तरजमा मिला है, मैंने बहुत पढ़ा है इस धर्म के बारे में । इतना तो आप सिखों ने भी नहीं पढ़ा होगा । मैं सच कहता हूँ, हम ने तो एक क्राईस्ट के सूली चढ़ने की बात को ले कर अपना धर्म सारे संसार में फैला दिया । आपका इतिहास तो हज़ारों क्राईस्टों से भरा पड़ा है । कौन-सा ऐसा धर्म है जिस के गुरू उबलती हुई देग में बैठे हों और गर्म तवी पर बैठे हों ? कौन सा ऐसा धर्म है जिसके गुरू ने अपना सीस चौराहे में कटवा दिया हो ? कौन से धर्म के आशिक ने बन्द बन्द कटवाए हों ? किस धर्म का आशिक आरे के साथ चीरा गया हो ? किस धर्म को मानने वालों ने जुल्म के विरुद्ध आवाज़ उठाने के लिए सिरों पर कफन बांध कर फोजी टुकड़ी बनाई हो, जो पूरी सल्तनत और सल्तनत की हकूमत से टकरा गई हो ? किस धर्म के रहनुमा ने अपने बच्चे नीहों में चिनवाए हैं ? कसम खुदा की, केवल पांच सौ सालों का इतिहास, और वह भी खून से लिखा हुआ है और वैसे भी आपकी गुरबाणी में प्यार है, मनुष्य की सेवा करने का आदेश है । प्यार के शब्दों का गायन करते हुए आप जुल्म के विरुद्ध तलवार उठा लेते हो और युद्ध करने के लिए तैयार हो जाते हो । अजीब धर्म है आपका । आपने इतने नायाब इतिहास को केवल दो करोड़ छातियों में कैद करके रखा हुआ है और दो करोड़ भी नहीं, मुझे तो डर है कि आजकल के पढ़े लिखे लोग तो अपने बच्चों को यह दासतां सुनाते ही नहीं होंगे और जो गांवों में रहने वाले लोग वे पढ़े लिखे नहीं वे वैसे ही इनमें धीरे-धीरे मुअज़ज़ियों का पानी मिलाते जाएंगे । ऐ दोस्त, विश्वास और अन्ध विश्वास में बहुत अन्तर होता है । विश्वास के लिये ज्ञान की किरण का होना ज़रूरी है । ज्ञान के बिना जो शेष बचता है उस में अन्ध-विश्वास यानि 'सुपरस्टीशन' की 'अैडलटरेशन' मिलावट होती जा रही है । क्या किया है आपने इसको रोकने के लिए ?"

"बाईबल को हम करोड़ों की तादाद में मुफ्त बांटते हैं या फिर दो या चार रुपये की कीमत रखते हैं । मैंने सुना है आपके गुरुद्वारों का प्रबन्ध करने वाली शिरोमणी गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी की वार्षिक आमदनी करोड़ों रुपये की है । उन पैसे से आपको गुरबाणी के तरजमे लाखों की तादाद में छापने चाहिए । सिख हिस्टरी के तरजमे संसार भर की सभी भाषाओं में छाप कर सारे संसार में भेजने चाहिए । हमने भी तो बाईबल को छापा है हिन्दुस्तान की सभी भाषाओं में, पंजाबी में भी । मैंने तो सुना है कि आपने सिख हिस्टरी भी पंजाबी में छपवा कर हर गांव के हर घर में नहीं पहुंचाई । कितने एहसान फरामोश हो आप, अपने गुरूओं के प्रति और अपने शहीदों के प्रति । एहसान फरामोशों के लिए नर्क के बिना और कहां स्थान हो सकता है । आप सभी नर्क में जाओगे । मुझे तो यही चिन्ता है, कमबखतों ! बहुत भीड़ कर दोगे वहां पर ।"

यह वो शब्द हैं जो लंदन के एक पादरी ने एक प्रसिद्ध सियासतदान और विद्वान सज्जन को लंदन में कहे और उसके कहने में थोड़ा सा भी झूठ नहीं है। लिटरेचर से कौम में जागृती पैदा करने के लिए हमारी लीडरशिप शिरोमणी कमेटी और अकाली दल कोई ध्यान नहीं दे रहा। सिखों का अपना न कोई समाचार पत्र है, न कोई प्रैस और न ही प्लेटफोर्म। सिखों को लोगों की लिखतों पर निर्भर करना पड़ता है जो तथ्यों को ठीक ढंग से पेश नहीं करते।

पूरी सिख लीडरशिप सियासत की ऐसी गहरी खाई में गिर गई है कि धर्म के प्रचार के लिये उसके पास समय नहीं है।

शिरोमणी कमेटी ने तो अभी तक गिनती की किताबें ही छापीं हैं, फ्री लिटरेचर छपाने और लाखों की गिनती में बांटने के विचार पर तो कमेटी ने कभी ध्यान ही नहीं दिया। शायद कमेटी यह समझती है कि यह एक गैर-ज़रूरी काम है जो किसी और संस्था को करना चाहिए।

'सिख मिशनरी कालिज' लुधियाना ने 160 के करीब छोटे-छोटे टरेक्ट सिख धर्म के बारे में छपवाए हैं जो कम कीमत और धार्मिक पुस्तकों के स्टाल लगा कर संगतों के पास पहुंचाए जाते हैं। कालिज के सभी वर्कर अपने काम धन्धे करने वाले निष्काम प्रचारक हैं और अपना दसवंद देकर इस संस्था को चला रहे हैं। कालिज के पास कोई ऐसा आमदन का साधन, गुरुद्वारे की चढ़त या कोई पूंजी नहीं है, जिससे छपा हुआ लिटरेचर फ्री बांटा जा सके। वैसे हमारा यह पक्का मत है कि जितनी देर सिख संगत पास फ्री लिटरेचर नहीं पहुंचता उतनी देर कौम में जाग्रिती नहीं आ सकती और कौम के अन्दर गुरबाणी के अर्थ सीखने, सिख इतिहास की गाथाओं को जानने की और सिख रहित मर्यादा के नियमों को समझने की भूख पैदा नहीं हो सकती। आज का भूला हुआ सिख घर में फजूल चीज़ों के लिए तो धन खर्च कर सकता है, शराब की बोतल के लिए तो बजट से पैसे निकाल सकता है परन्तु धार्मिक लिटरेचर, गुरबाणी स्टीक, सिख इतिहास के बारे में पुस्तकों पर कुछ भी रुपये खर्च करने के लिये तैयार नहीं। उस को तैयार करने के लिये और लिटरेचर पढ़ने की भूख पैदा करने के लिये 'सिख मिशनरी कालिज' की तरफ से फ्री लिटरेचर प्रोग्राम बनाया गया है।

सिख संगत और दानी सज्जनों की सेवा में निवेदन है कि वे बढ़-चढ़ कर धन इस प्रोजैक्ट के लिए भेजें। कम से कम दस रुपये तो हर पंथ-दर्दी को भेजने चाहिए। सिख मिशनरी कालिज के प्रबन्धकों ने यह पहली बार अपील की है। हमें पूर्ण आशा है कि हर पंथ-दर्दी अपने दसवंद में से 'फ्री लिटरेचर फंड' के लिए ज़रूर धन भेजेंगे और दूसरों को प्रेरित करेगा। आप की यह भेजी राशि केवल फ्री लिटरेचर बांटने के लिए खर्च की जायेगी। इस का अलग खाता खोला गया है। संगत जब भी चाहे उनको फ्री लिटरेचर बांटने के लिए भेजा जाएगा। हर पंथ-दर्दी जो इस कमी को महसूस करता है और लंदन के पादरी के शब्दों को झूठा सिद्ध करना चाहता है वह हर मास अपने दसवंद में से रैगूलर सहायता 'फ्री लिटरेचर फंड' के लिये भेजे। 'सिख मिशनरी कालिज' के सभी सहयोगियों, सर्कलों और हितैषियों को निवेदन है कि वह भी अपने अपने सर्कलों से राशि इकट्ठी करके हर मास 'फ्री लिटरेचर फंड' के लिये भेजें। आप यह लिटरेचर 50/- रु० प्रतिसैंकड़े के हिसाब से मंगवा कर बांट सकते हैं। ❀❀❀❀